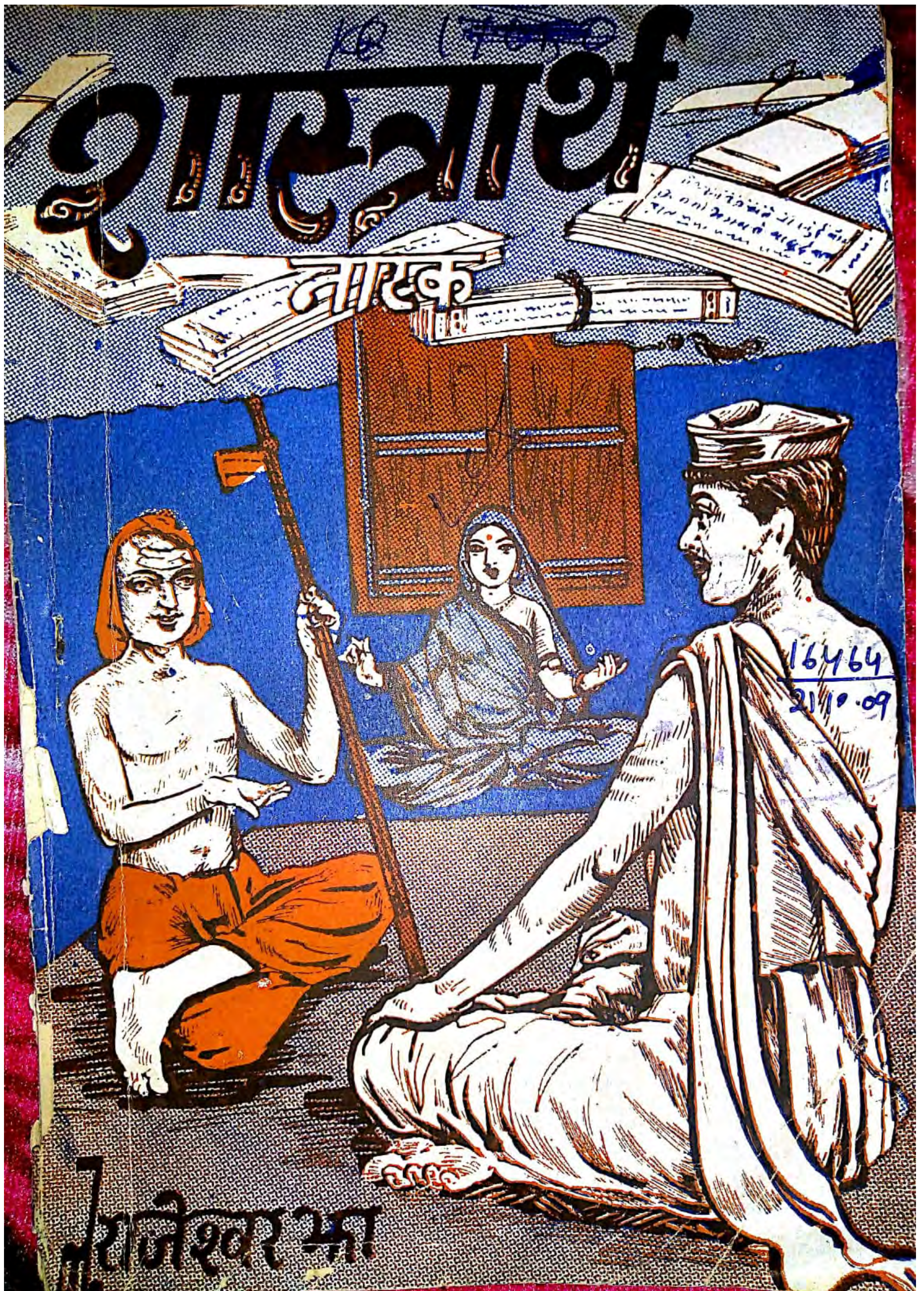
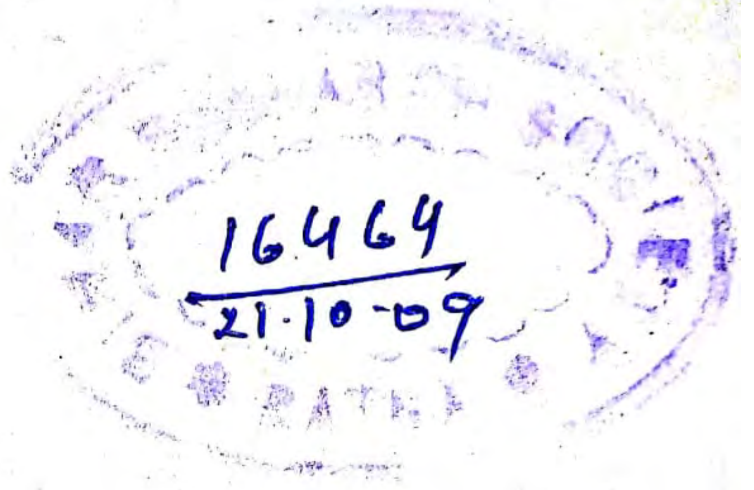

शास्त्रार्थ
नाटक
राजेश्वर झा

शास्त्रार्थ

नाटक



लेखक
राजेश्वर झा
बिहार रिसर्च सोसाइटी, पटना

प्रकाशक
अमरनाथ प्रकाशन
रसुआर (सहरसा)

पुस्तक प्राप्ति स्थान :
श्री अमरनाथ झा
ग्राम : रसुआर
डाक : निर्मली
जि० : सहरसा

दाम : एक टाका पचास पैसा

मुद्रक
आदर्श प्रेस
पटना—४

सादर भेंट

भारतीय संस्कृति, स्मृति, संविधान एवं दण्डनीतिक महान्
विद्वान्, जे स्पष्टवादिताक हेतु प्रख्यात तथा शरणागतक
शरण्य छथि; जे राष्ट्र भावना सँऽ प्रेरित भए महा-
धिवक्ताक पद त्यागि मात्र अल्प कालहिक हेतु
पटना उच्चन्यायालयक मुख्य न्यायाधीशक पद
ग्रहण कएल; जे प्राचीन भारतीय शास्त्र ओ
शास्त्रार्थक महान् प्रेमी एवं मिथिलाक
संस्कृतिक संरक्षक छथि एहि महा-
पुरुष पंडित श्री लक्ष्मी कान्त
झा जीक करकमल
मे सादर भेंट ।



पं० श्री लक्ष्मी कान्त झा

(पटना उच्चन्यायालयक मुख्य न्यायाधीशक रूप मे)

प्राक्कथन

शास्त्रार्थक विषय-वस्तु शंकराचार्य, मण्डन मिश्र ओ भारतीक शास्त्रार्थ सँऽ थिक। एहि मे वर्णित कथानकक मूल आधार तँऽ श्री विद्यारण्य विरचित शंकर दिग्विजय पर अछि मुदा अनेकों स्थलक आधार हमर अपन कल्पना थिक जकरा इतिहास सँऽ कोनो सम्पर्क नहि रहि सवर्दा स्वच्छन्द ओ स्वतंत्र अछि।

प्रारम्भे सँऽ मिथिला मे एक अखण्ड विचारधारा प्रवाहित होएत आबि रहल अछि जे स्वतन्त्र रूप सँऽ समस्त विश्वक बौद्धिक जीवन मे नव ज्योति प्रदान कैँ ज्ञान गंगा कैँ विविध प्रकारे पुष्टि करैत आयल अछि। विश्वक आन-आन भाग मे जखन राजनैतिक विप्लव तथा स्वार्थ सिद्ध मे द्वेषक भावना प्रच्छन्न रूप मे पाओल जाइत छल ओहि समय मिथिलाक प्रांगण मे शास्त्रीय तर्कपूर्ण विश्लेषण एवं तत्सम्बन्धित द्वेषक प्राबल्य पाओल जाइछ। एहि उदात्त भावना कैँ सर्वप्रथम चार्वाकक भौतिकवाद, तकर बाद लोकायातिक सिद्धान्त ओ एकर उपरान्त नैयायिक सिद्धान्त पर नास्तिक बौद्धक प्रहार भेल। भिक्षु नागार्जुन प्रभृति बौद्ध दार्शनिक द्वारा न्याय एवं वैशेषिक मतक खण्डन भेल जकर समुचित उत्तर वात्स्यायन अपन भाष्य मे देलन्हि अछि।

गुप्त साम्राज्यकाल सब तरहें भारतीय इतिहास मे स्वर्णयुग मानल जाइछ। एहि युग मे असंग तथा वसुबन्धुक विज्ञानवादक उत्पत्ति भेल जे मीमांसाक तर्क पर कठोर आघात सँऽ कर्मकाण्डक प्रगति कैँ अवरूद्ध कएल।

दिङ्नाग, धर्मकीर्ति आदि विज्ञानवादी बौद्ध विद्वानक द्वारा वैदिक धर्मक अखण्डताक रक्षा कुमारिल सँऽ भेल जकर विश्लेषण श्लोकवार्तिक ग्रन्थ मे विस्तार पूर्वक उपलब्ध होइछ।

कुमारिलक समय सप्तम् शताब्दीक उत्तरार्ध मानल जाइछ। कुमारिल कैँ अनेक विद्वान् शिष्य भेलन्हि जे मीमांसा शास्त्रक विशेष प्रचार कए भारत मे बौद्धक विनाश तथा सनातन धर्मक पुनरुद्धारक कारण स्वरूप भेलाह। एहि शिष्य मे कुमारिलक तीन शिष्य (१) प्रभाकर, (२) मण्डन तथा (३) उम्वेक (भवभूति) प्रमुख मानल जाइछ।

प्रभाकर मीमांसा शास्त्र मे नवीन मतक प्रवर्त्तक भेलाह जे "गुरुमत" नामे प्रसिद्ध अछि।

मण्डन मिश्र कुमारिलक दोसर प्रधान शिष्य छलाह। आनन्द गिरि (शंकर विजय, पृष्ट १८१ मे) कुमारिल द्वारा मण्डन मिश्र कैँ एहि रूप मे उल्लेख कएलन्हि अछि—'मद्भगिनीभर्त्ता मण्डन मिश्र सर्वज्ञ इव सकल विद्यासु पितामह इव वद्यते'। एहि वाक्य सँऽ मण्डन मिश्रक अगाध पाण्डित्यक तँऽ बोध होइतहि अछि संगहि इहो ज्ञात होइछ जे ओ कुमारिलक बहिनोइ छलाह।

मण्डन मिश्रक व्यक्तिगत नाम विश्वरूप छल मुदा पण्डित मण्डलीक मण्डनस्वरूप भेला सँऽ स्वभावतः मण्डन नाम सँऽ प्रख्यात भेलाह। माधवाचार्यक (विद्यारण्य) अनुसार मण्डन मिश्रक पिताक नाम हिममित्र (हिममिश्र ?) तथा महिष्मती नगरी जन्मभूमि छलन्हि जे सहरसा जिलाक आधुनिक महिषी सँऽ भिन्न नहि भए सकैछ।

मण्डन मिश्रक विदुषी पत्नी सरस्वती वा भारती रूप ओ गुण मे सरस्वती सदृश् हेबा कारणे उभय भारती नामे सम्बोधित होइत छथि। माधवाचार्यक अनुसार भारतीक पिताक नाम विष्णुमित्र (मिश्र ?) छलन्हि तथा ओ पाटलिपुत्रक समीप सोन नदी कातक कोनो गाम मे रहैत छलाह।

भारती वेद, वेदांग, इतिहास, गणित, धर्मशास्त्र प्रभृति शास्त्र मे प्रवीणता प्राप्त केने छलीह। शंकर दिग्विजयक अनुसार तँऽ एहेन कोनो शास्त्र नहि छल जे "ओ" नहि जनैत छलीह।

वस्तुतः मण्डन मिश्र एवं भारतीक सम्मिलित प्रयासक फल छल जे तत्कालीन मिथिलाक जनसाधारणक कोन कथा सुग्गा मैना सन जीव जन्तुओ धरि मीमांसाक तथ्य सँऽ अवगत पाओल जाइत छल तथा उत्तर भारत ओहि समय नास्तिक बौद्धक केन्द्र रहितहुँ मिथिलाक धार्मिक जीवन कैँ कानहुँ तरहेँ उद्वेलित नहि कए सकल।

प्रायः लोकक आचरण, धर्म, दर्शन, साहित्य आदिक परिवर्त्तन समयानुसार होइत छैक। महाभारतक उपरान्त युद्धक प्रति सधारणतः घृणाक आधार स्वरूप विज्ञानक अवनति तथा दर्शन शास्त्रक प्रगति भेल। सम्भवतः एहि कारण सँऽ बौद्ध धर्म अहिंसाक प्रावल्य भेला सँऽ प्रगति कएल तथा वैदिक धर्म कर्मप्रधान भेला सँऽ अविरूद्ध रहल।

गुप्त साम्राज्यकाल शक, हूण आदिक आक्रमणक युग छल। देशक मौलिक एकता, पराक्रम, तथा जीवन बलिदानक ओहि समय देशक स्वतन्त्रताक रक्षाक हेतु नितान्त आवश्यक छलैक। अतः अहिंसा सर्वदा अहितकर प्रतीत भेल। फलस्वरूप वैदिक धर्म तथा दर्शनक अभ्युदयक प्रारम्भ एहि युग मे भेल। सप्तम् शताब्दीक उत्तरार्द्ध मे तँऽ वैदिक ज्ञानक दू भिन्न धार एक शंकराचार्य रूप मे दोसर धार मण्डन मिश्रक सहयोगक हेतु दक्षिण सँऽ प्रवाहित होएत उत्तर धरि आयल जे बौद्ध धर्म कैँ अंतिम प्रहार कएल तथा वैदिक धर्म कैँ चिरस्थायी बनाओल।

शंकराचार्यक जन्म केरल प्रान्तक कालटी ग्राम मे भेल छलन्हि। पिताक नाम शिवगुरु छल। शिवगुरुक मृत्यु असमय मे भेल अतः शंकराचार्यक पालन-पोषण आदिक भार माता सती देवी पर पड़ल। शंकराचार्य मात्र

आठ वर्षक अवधि मे सन्यास ग्रहण कएल तथा गोविन्दाचार्य सँऽ अद्वैत वेदान्तक सिद्धान्त तीन वर्ष धरि प्राप्त कएल। तीन वर्षक उपरान्त शंकराचार्य गोविन्दाचार्यक अनुमति सँऽ काशी अयलाह तथा विश्वनाथजीक दर्शन कए ब्रह्मसूत्रक ऊपर भाष्यक रचनाक संकल्प कएल जे बदरिकाश्रम मे सम्पन्न भेल।

भारतक विभिन्न तीर्थ स्थान मे घूमैत शंकराचार्य प्रयाग अएलाह तथा ओहि ठाम ओ कुमारिल भट्टक दर्शन कएलन्हि जे ओहि समय तुषानल मे अपन शरीर दग्ध कए रहल छलाह। शंकराचार्यक बड़ इच्छा रहन्हि जे कुमारिल हुनक भाष्य पर वार्तिक लिखतथि मुदा एहि दृश्य कँ देखि ओ अवाक् रहलाह।

कुमारिल पहनहि सँऽ शंकराचार्यक वृतान्त सुनने छलाह। अतः शंकराचार्य कैँ देखि ओ अत्यन्त प्रसन्न भेलाह तथा वेदान्त मार्गक प्रकाशन ओ प्रचारक हेतु अपन पट्टशिष्य मण्डन मिश्र कैँ एहि मार्ग मे दीक्षा देवाक परामर्श देल।

कुमारिलक आदेशानुसार शंकराचार्य मण्डन मिश्र सँऽ भेंटक हेतु महिषमती नगरी अएलाह। दूपहरक बेर छल। मण्डन मिश्रक पनिभरिनी घैल लए पानिक हेतु जा रहल छलीह। शंकराचार्य मण्डन मिश्रक घरक पता ओकरहि सँऽ पूछल। पनिभरिनी अनायासहि बाजि उठलीह की अहाँ परदेशी छी? किएक तँऽ के ऐहेन व्यक्ति अछि जे पण्डितक मण्डनभूत, मीमांसाक मूर्धन्य पण्डित मण्डन मिश्र कैँ नहि जनैत अछि? खैर अहाँ जाउ जाहि दरबाजा पर पिजड़ा मे बन्द सुग्गा एहि तरहे परस्पर विवेचना करैत हो—

जगद्ध्रुवं स्यात् जगदध्रुवं स्यात्
क्रीड़ाङ्गना यत्र गिरं गिरन्ति
द्वारस्थ नीड़ान्तर सनिरूद्धा,
जानिहि तन्मण्डन पण्डितौकः॥

स्वतः प्रमाणं परतः प्रमाणं,
क्रीड़ाङ्गना यत्र गिरं गिरन्ति ।
द्वारस्थ नीड़ान्तर सन्निरूद्धा,
जानिहि तन्मण्डन पण्डितौकः ।।

पनिभरिनीक एहि तरहक मीमांसाक तथ्यपूर्ण उत्तर सुनि शंकराचार्य कए अत्यन्त विषमय तँऽ होएब साधारणे छल मुदा मण्डन मिश्रक द्वार रक्षकक उत्तर जे शंकराचार्य सँऽ पूछला पर छल जे पण्डित जी एखन पिताक श्राद्ध कए रहल छथि अतः अखन ओ शिखा-सूत्र हीन व्यक्ति सँऽ एहि अवसर पर भेंट नहि कए सकैत छथि शंकराचार्यक रहल-सहल धैर्य तोड़ि देलक तथा पण्डित मण्डन मिश्र सँऽ भेंटक हेतु ओ ततेक उत्सुक भेलाह जे हुनका शुक्ष्म रूप धारण करए पड़लन्हि ।

मण्डन मिश्र एवं शंकराचार्यक प्रथम संभाषणे एक तरहे शास्त्रार्थक प्रारम्भ छल जे संस्कृत मे भेला सँऽ उचित रूपे मैथिली मे अनुवाद नहि भए सकल । मण्डन मिश्र एवं शंकराचार्यक प्रथम संभाषण शंकरदिग्विजय मे एहि तरहे पाओल जाइछ—

कुतोमुण्डयाग्लान्मुन्डयी ।
पन्थास्ते पृच्छयतेमया ।।
किमाह पन्थास्त्वन्माता,
मुण्डेत्याह तथैवहि ।
पन्थानं त्वम पृच्छस्त्वां,
पन्थाः प्रत्याह मण्डनः ।।
एवन्मतित्यत्र शब्दोऽय,
नमां ब्रूयाद् पृच्छकम ।।
अहो पीता किमु सुरा,
नैव श्वेता यतः स्मर ।

किं त्वं जानासि तद्वर्णं,
वर्णं भवान्स्मम ॥

इत्यादि जे दुहूक पाण्डित्य, वाक्पटुता एवं तीव्र ज्ञानक बोध करबैछ।
कहल जाइछ जे मण्डन मिश्र ओ शंकरक शास्त्रार्थ अनेको दिन धरि चलल जकर मध्यस्थता किओ आन नहि मण्डन मिश्रक धर्म पत्नी भारती कए रहल छलीह।

भारती दूइ माला बना दुहू प्रतिद्वन्दिक गरदनि मे पहिरा देल तथा घोषणा कएल जे जनिकर माला मुरझा जाएत तनिकर पराजय होएत तथा ओ अपन गृह-कर्म मे सतत् सलग्न रहलीह। मण्डन मिश्रक माला मुरझा गेला पर ओ निष्पक्ष रूप सँऽ शंकराचार्यक विजयक घोषणा तँऽ कएल मुदा धर्मशास्त्रानुसार अपन अधिकारक रक्षाक हेतु सगर्व तत्पर भए शंकराचार्य कैँ शास्त्रार्थक हेतु वाध्य कएल तथा अपन अपूर्व वाक्चातुर्य, शास्त्र ज्ञान तथा तीव्र बुद्धि सँऽ शंकराचार्य कैँ मूक कए देल जे एक मासक अवधि अपन ज्ञानार्जनक हेतु लेल तथा सन्यास मार्गक प्रतिकूल परकाय प्रवेश सँऽ एहि विद्या कैँ प्राप्त कएल।

वस्तुतः शंकर एवं भारतीक शास्त्रीय संभाषण सँऽ प्रतीत होइछ जे भारतीक विद्वता, वाक्चातुर्य आदि शंकराचार्य सँऽ पैघ छल। शास्त्रक ज्ञानक अतिरिक्त भारतीक त्याग तँऽ असाधारण बुझना जाइछ जे अपन स्वामी कैँ प्रतिज्ञाक शर्त सँऽ कथमपि नहि हटाओल तथा सन्यास मार्ग मे दीक्षाक परामर्श दए शंकराचार्यक शिष्यत्व स्वीकार कराओल। निःसंदेह एहि तरहक मर्यादा भारतीय नारी मध्य स्वाभावतः पाओल जाइछ।

शास्त्रार्थक दोष, भाषाक त्रुटि एवं आन तरहक अभावक हेतु हम साहित्यकार लोकनि सँऽ क्षमा याचना करैत छी।

२६ जनवरी, १६६७ ई० **राजेश्वर झा**

नाटकक प्रधान पात्र

पुरुष

मण्डन मिश्र	....	मिथिलाक महान् मीमांसक
शंकराचार्य	....	प्रसिद्ध अद्वैतवादी सन्यासी
कुमारिल भट्ट	....	मण्डन मिश्रक गुरू
प्रभाकर भवभूति	....	मण्डन मिश्रक सहपाठी
सनन्दन	....	शंकराचार्यक प्रधान शिष्य

(जैमिनि, अमरुक, मंत्री आदि आन-आन पात्र)

स्त्री

भारती	....	मण्डन मिश्रक विदुषी पत्नी

(पनिभरिनी, राजा अमरुकक रानी आदि पात्र)

पहिल अंक

दृश्य : एक

कैलाश

(भगवान शंकर एवं पार्वती बैसल छथि एवं ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्रादि देवता स्तुति करैत छथि)

प्रभुं प्राणनाथं विभुं विश्वनाथं जगन्नाथनाथं सदानन्द भाजाम्। भवद्भव्यभूतेश्वरं भूतनाथं शिवं शंकरं शंभुमीशान-मीडे ॥ गले रुंडमालं तनौ सर्पजालं महाकालकालं गणेशा-धिपालम्। जटाजूटभंगोत्तरंगौवशालं शिवं ॥२॥ मुदा-माकरं मंडनं मडयंतं महामंडलं भस्मभूषाधरंतम्। अनादिं ह्यपारं महामोहभारं शिवं ॥३॥ तटाद्योनिवासं महाट्टाहासं महापापनाशं सदा सुप्रकाशम्। गिरीशं गणेशं सुरेशं महेशं शिवं ॥४॥ गिरीन्द्रात्मजासंगृहीताधेदेहं गिरौ संस्थितं सर्वदा-सन्नगेहम्। परब्रह्म ब्राह्मादिनिर्वद्यमानं शिवं ॥५॥ कपालं त्रिशूलं कराभ्यां दधानं पदांभोजनभ्रामकामं ददानम्। बली-वर्दयानं सुराणां प्रधानं शिवं ॥६॥ शरच्चंद्रगात्रं गुणानंदपात्रं त्रिनेत्रं पवित्रं धनेशस्य मित्रम्। अपर्णाकलत्रं चरित्रं विचित्रं शिवं ॥७॥ हरं सर्पहारं चिताभूविहारं भवं वेदसारं सदानिर्विकारम्। श्मशाने वसंतं मनोजं दहतं शिवं ॥८॥

शंकर :—इन्द्रादि देवता लोकनिक आगमनक प्रयोजन ?

इन्द्र :—प्रभु ! सर्वज्ञ एवं सर्वव्यापी त्रिलोकाधिपति भगवान शंभु कैं त्रिलोकक कोन ऐहेन वस्तु अछि जे नहि बुझल हो ?

मृतलोकक कर्मकाण्डक फलाफल पर देवलोक आधारित अछि। लोक धर्मक नाश सँ देवलोकक नाश होइछ और देवलोकक नाश सँ प्रलय और प्रलय सँ सृष्टिक नवसंचार।

भगवन ! समस्त लोक मे नास्तिकक कुतर्कक जाल मे वेदवाणी ओझराएल अछि, कर्मकाण्डक लोप भेला सँ यज्ञ-याग बंद भए गेल तथा प्रभुक सत्ता स्वयं संदिग्ध बुझि पड़ैछ। अहि नास्तिकक कुतर्कक फलस्वरूप देवलोक मे हलचल मचि गेल अछि तथा देवतालोकनि कतहु आन ठाम आश्रय नहि पाबि प्रभुक शरण आएल छथि।

शंकर :—इन्द्र ! दुख सँ निवृत निरातिशय सुख मनुष्यमात्र कैं अभीष्ट होइछ जे धर्मक अनुष्ठान एवं कर्मफलानुसार उपलब्ध होइछ।

वीणाक उपयोगिता रूप लावण्य सँ नहि भए मधुर ध्वनि सँ होइछ जे क्रिया द्वारा प्राप्त होइछ। क्रियाक फल चारि प्रकारक होइछ जे उत्पत्ति, प्राप्ति, विकार और संस्कार कहबैछ। कुम्हारक क्रिया सऽ घैलक, गमन क्रिया सँ देशान्तर प्राप्ति, पाकक क्रिया सँ तण्डुलक विकार तथा लाच्छारसक सेक सऽ कपासक बीज मे गुणाधान द्वारा संस्कार होइछ। वस्तुक उपलब्धि कर्मक फलाफल सऽ होइछ जे चित्त-शुद्धि तथा शुभकर्मक द्वारा प्राप्त होइछ।

यज्ञ यद्यपि लौकिक एवं पारलौकिक सब प्रकारक फल प्राप्तिक प्रधान साधन थिक मुदा यज्ञक फलाफल अर्थ ज्ञानक बिना नहि सफल होइछ। यज्ञक असफलता सँऽ कर्मकाण्ड पर आस्था उत्पन्न होइछ तथा वेदक प्रामाणिकता संदेहात्मक बुझि परैछ।

इन्द्र— भगवन ! अर्थक ज्ञानक उपलब्धि कोना भए सकैछ ?

शंकर— इन्द्र ! व्याकरण आदि अङ्ग विद्याक सङ्ग वेदक अध्ययन मात्र सँऽ अर्थक ज्ञान तँऽ होइछ मुदा अर्थक ज्ञानमात्रे सँऽ विषयक निर्णय नहि भए सकैछ। विषयक निर्णय विचार-शास्त्रक अधीनक वस्तु थिक।

इन्द्र— प्रभु ! कुमारिल सन विचार शास्त्रक विद्वानक अछैत कर्मकाण्डक लोप तथा गायत्री-मातृक वेदक अनादर की विचारक वस्तु नहि थिक ?

शंकर— इन्द्र ! मनुष्यमात्र मे युगधर्मक प्रभाव पाओल जाइछ। समस्त विश्व मे अहि प्रभाव सँऽ रहित एक पृथक प्रान्त यज्ञभूमि की नहि अछि ? नास्तिकक कुतर्कक जाल मे समस्त विश्व बाझि गेल मुदा इ प्रान्त सतत् विचार शास्त्रक माध्यम सँऽ कर्मकाण्डक मर्यादाक रक्षा सफलतापूर्वक करैत रहल। का एहि मे कुमारिल आदि एहि प्रान्तक विद्वानक कृपा नहि ?

इन्द्र— प्रभु ! समस्त विश्व जँऽ अन्धकार मे रहए तँऽ एक कोणक प्रकाश कतऽ तक प्रकाशित कऽ सकैछ ?

शंकर— इन्द्र ! वैदिक धर्मक रक्षाक हेतु त्याग एवं तपस्याक आवश्यकता अछि। पितामह, मण्डन मिश्र नामे मिथिलाक महिष्मती नगरी मध्य, सरस्वती मगध देशक हिम-

मित्रक कन्या रूप मे जन्मग्रहण करथि तथा दम्पत्ति रूप मे गुढ़ विचार शास्त्रक माध्यम सँऽ कर्मकाण्डक मर्यादाक रक्षा करथि। हम स्वयं दक्षिणक केरल प्रान्तक शिवगुरुक पुत्ररूप मे शङ्कराचार्य नामे जन्मग्रहण करब तथा ज्ञानमार्गक अवलम्बन कए वैदिक धर्मक पुनरुद्धार करैत महिष्मती नगरी आवि मण्डन मिश्र सँऽ ज्ञानमार्ग एवं कर्मकाण्डक श्रेयक प्रसङ्ग मे शास्त्रार्थक द्वारा विद्वानक वाणीक कुशलता. शब्दक धारावाहिकता, शास्त्रव्याख्याक निपुणता आदि प्रारूपक निरूपण करब।

(इन्द्रादि देवता लोकनि—भगवान शंकरक जय)

(पटाक्षेप)

दृश्य : दू

कुमारिलभट्टक चौपाड़ि

(प्रभाकर, मण्डन तथा उम्वेक अध्ययन करैत छथि)

कुमारलि—धर्मक अनुष्ठान सँऽ अभिमत फलक प्राप्ति होइछ जे श्रुति, स्मृति, पुराण आदि अनेक धर्मग्रंथ मे पाओल जाइछ। धर्मक लक्षण, प्रमाण आदिक जिज्ञासाक समाधान मीमांसा शास्त्र सँऽ होइछ। मीमांसाक उद्देश्य थिक कर्मक प्रधानता। सत्कर्म मोक्ष प्राप्तिक हेतु आवश्यक थिक। विदेहमुक्ति वास्तविक मुक्ति तथा जीवनमुक्ति उत्कृष्ट साधक मात्र होइछ।

मण्डन-- गुरु ! जीव की ब्रह्मक आश्रित अछि ?

कुमारिल—कथमपि नहि। अविद्याक आश्रय जीव अछि तथा विषय ब्रह्म थिक। ब्रह्म ने स्वयं आने अविद्या प्रतिबिम्बित भेला सँऽ जगतक कारण स्वरूप होइछ। जीव स्वयं अपन नैसर्गिक अविद्याक कारण जगतक कल्पना करैत अछि।

भिन्न-भिन्न जीव अपन स्वभाविक अविद्याक दृष्टि स्वरूप भिन्न-भिन्न सृष्टिक कल्पना करैत अछि जे साम्य होइछ एक्य नहि।

अविद्या कैँ माया ओ मिथ्याभास कहैछ जे ने तँऽ ब्रह्मक स्वभाव थिक आ ने ब्रह्म सँऽ भिन्न कोनो अर्थान्तर। भेद ओ प्रपञ्च अविद्याक कार्य थिक। ब्रह्म मे भेद नहि भए सकैछ। भेद अविद्याजन्य होइछ तथा विशुद्ध विज्ञान स्वरूप ब्रह्म कैँ अविद्या स्पर्श तक नहि कए सकैछ।

अविद्या अविद्याजन कर्मक द्वारा नष्ट होइछ। पाँक मे लसकल व्यक्ति पाँकक सहारा मात्रहि सँऽ पाँकक बाहर होइछ। अविद्या सँऽ मृत्यु कैँ पार कए विद्या सँऽ अमृतत्वक प्राप्ति होइछ।

मण्डन—वर्ण मे भेद इत्यादि अवस्था प्रयुक्त होइछ व्यक्तिक भेद निमित्तक नहि, एहि मे की प्रमाण अछि?

कुमारिल—मीमांसाक मत मे तँऽ भेदाभेद दुहू मानल जाइछ। कतहु भेदांश धर्मीक आलम्बन सँऽ तथा अभेदांश धर्मीक आलम्बन सँऽ तथा कतहुँ अभेदांश धर्मीक आलम्बन सऽ तथा भेदांश धर्मीक आलम्बन सँऽ होइछ। अर्थात् कतहुँ भेद धर्मी विषयक तथा अभेद धर्म विषयक आ कतहुँ अभेदहि धर्मी विषयक ओ भेद धर्म विषयक होइछ। प्रमाणक हेतु मुण्ड गौ; चित्र गौ इत्यादि स्थल मे मुण्ड चित्रादि गोधर्मीक परस्पर भेद भेला सँऽ एहि मे रहनिहार गोत्वधर्म अछि। एहि मे भेद नहि भेला सँऽ जातित्व युक्त अछि कारण ओ एक एवं अनेकानुगत अछि। तथा जतऽ धर्मी मे भेद नहि भए धर्मं मे भेद अछि ततए जाति कल्पनायुक्त

नहि होइछ। प्रमाणस्वरूप कहि सकैत छी जे देवदत्त युवक छथि, स्थूल छथि, कृश छथि। एहिठाम युवत्वादि धर्म कैं भिन्न-भिन्न रहितहुँ धर्मी देवदत्त भेला सँ देवदत्त जाति नहि मानल जा सकैछ।

मण्डन— गुरु! वेद जे धर्मक विषय मे स्वतः प्रमाण थिक कोन तरहें विभक्त अछि तथा यज्ञक परामर्श कोन रूप मे दैत अछि ?

कुमारिल—वेद विधि, अर्थवाद, मन्त्र तथा नामधेय नामे चारि भाग मे विभक्त अछि। अज्ञात अर्थक ज्ञापक वेदवाक्य कैं विधि कहल जाइछ जे स्वर्गफल प्राप्तिक विधान करैत अछि। प्रशंसा या निन्दाजनक वेदवाक्य कैं अर्थवाद कहैछ। प्रयोग मे समवेत अर्थक स्मारक वेदवाक्य कैं मन्त्र कहैछ तथा यज्ञक विधान कैं नामधेय कहल जाइछ।

मण्डन— गुरु! 'तत्र तु नोक्तम्, अत्रापि नोक्तमतः पौनरुक्तम्' वाक्यक तात्पर्य की भए सकैछ ?

कुमारिल—मण्डन! एहि वाक्यक तात्पर्य तऽ एहि सँऽ होइछ जे ने त ओतहि कहल आ ने एतहि। तदा इ उपयुक्त कोना भए सकैछ? पुनरुक्त तऽ ओ कहल जाइछ जे पहिनहुँ कहल गेल अछि आ पुनः कहल जाय, तखन पुनरुक्त कोना भेल ?

प्रभाकर—'तत्र तुना (तुशब्देन) उक्तम्, अत्र अपिना (अपिशब्देन) उक्तम् अतः पौनरुक्तम्—ओहिठाम तु शब्द सऽ कहल तथा एहिठाम अपिशब्द सँऽ। अतः पुनरुक्त भेल।

कुमारिल—प्रभाकर! 'त्वमेव गुरुः'। आइ सँऽ अहाँक मत सर्वत्र स्वतन्त्र होयत तथा जगतमध्य गुरु-मत नाम सऽ जानल जायत।

(मण्डन सँऽ)

मण्डन ! नास्तिक मतक खण्डन सँऽ वेदक उद्धार अहीं लोकनिक द्वारा संभव भए सकैछ। सकल शास्त्रक गूढ़ मर्म कैँ जननिहारि, शील गुण सम्पन्ना साक्षात् सरस्वती-स्वरूपा भारती नाम्नी हमर बहिनिक पाणिग्रहण कए अहाँ हमरा कृतार्थ करी जे अहाँक पांडित्य, गुण-गौरव आदिक रक्षा सतत् करत।

मण्डन— गुरु ! अपनेक आज्ञाक पालनक हेतु हम सतत् तत्पर रहब।

(पटाक्षेप)

दृश्य : दू

(मण्डन मिश्रक भवन)

खवासिनी गवैत अछि :—

अङ्ग अङ्ग रचओं विधि सओंरति,
मण्डन मण्डित वाम विराजति।
सोम सुभाल सुशोभित आनन,
चम्पक दामन की छवि छाजति ॥
भीषण तीख कटाछ छटा बरिसए,
सरिसए पति सओंरति छाजति ॥
श्रुति पुराण शास्त्र जाहि यश गावय,
जानि ताहि जग अचरज पावय ॥
मण्डन मण्डित वाम विराजति,
नारीरत्न भारती कहावथि ॥

(प्रस्थान)

(मण्डन मिश्र तथा भारती बैसल छथि)

भारती— नाथ ! जँऽ शब्द नित्य ओ व्यापक थिक तऽ सवदा सभ शब्दक भान हेवाक चाही, कारण व्यापक ओ नित्य भेला सऽ सर्वत्र एवं सर्वदा शब्दक सत्ता रहैत,तथा अभिव्यञ्जक ध्वनिक सहायता सँऽ सभ शब्दक भान आवश्यक प्रतीत होइत ?

मण्डन— शब्द यद्यपि व्यापके अछि मुदा ओ सर्वत्र उत्पन्न नहि होइछ। कारण यद्यपि शब्द व्यापक भेला सऽ सर्वत्र रहैत अछि तथापि जतए अभिव्यञ्जक ध्वनि सँऽ संस्कृत होइछ ततहि अभिव्यक्त होइछ अन्यथा नहि !

भारती— नाथ ! अविद्या ओ जीवक की सम्बन्ध अछि तथा मोक्षक की साधन होइछ ?

मण्डन-- अविद्या दू प्रकारक होइछ। अभावात्मक, अनुग्रहण या अज्ञान तथा भावात्मक अन्यथा ग्रहण या मिथ्याज्ञान। प्रथम मानसिक थिक जे अमलानन्द पूर्वापूर्व भ्रमसंस्कार कहवैछ तथा दोसर अविद्या वैषयिक थिक जे जीव ओ जगत दुहुक उपादान करण थिक। वैषयिक अविद्या भावरूप, अनादि, जड़ ओ शक्तिरूप होइछ जे जीव ओ जगत विषयी ओ विशय, अस्मत् ओ युष्मत् दुहुक उपादान करण थिक।

अविद्या ओ जीवक चक्र वीज ओ अंकुर जकाँ अनादि होइछ। जीवक कारण थिक भ्रम संस्कार तथा एहि भ्रम संस्कारक कारण थिक पूर्वभ्रमसंस्कारक परम्परा। एहि परम्पराक नाम थिक मानसिक अविद्या।

सप कखनहुँ आजावस्था मे रहैत अछि और कखनहुँ कुण्डलावस्था मे मुदा ओ सपत्व कैँ नहि छोड़ैत अछि। आत्मा अनेक बुद्धि, वेदना, यत्नाद्यावस्था मे प्रतीत होइत अपन चैतन्यस्वरूप कैँ नहि छोड़ैत अछि। स्वसम्वेदना आत्मा कैँ सिद्ध करैछ तथा प्रत्यभिज्ञा ओ स्मृति नैरात्मवाद पर कुठाराघात करैछ।

अविद्या संसार थिक तथा प्रशान्त विद्याक द्वारा अविद्याक नाश होएब मोक्ष।

मोक्ष काम्य ओ प्रतिषिद्ध कर्मक वर्जन ओ नित्यकर्मक सेवन सँऽ प्राप्त होइछ।

कर्म ओ उपासना ज्ञानक परोक्षताक द्वार कैँ अपरोक्ष बनबैछ जे वेदक विधि ओ निष्प्रपञ्चता सँऽ उपलब्ध होइछ जाहि सँऽ धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्षरूपी पुरुषार्थक प्राप्ति होइछ।

भारती— स्वामी ! विज्ञानवादी योगी भगवान बुद्ध कैँ सर्वज्ञ तथा विज्ञानमात्रक अतिरिक्त अन्य समस्त पदार्थ कैँ मिथ्या ओ विज्ञान कैँ तत्त्वरूप मानैत अछि।

मण्डन— कोनो व्यक्ति सर्वज्ञ नहि भए सकैछ। बुद्धिमान पुरुष विशेष ज्ञानक हेतु अधिकज्ञ भए सकैछ मुदा सर्वज्ञ होयब सम्भव नहि।

तीर सँऽ बान्हल नाव जकाँ जखन बुद्धि आगाँ नहि बढ़ि कुण्ठित भए जाइछ, विचारहुँ जतए सँऽ अपन पएर पाछाँ खींचैत ओ तर्कहुँ जतऽ जेबाक चेष्टा नहि कए सकैछ ओ ज्ञान थिक तथा ओकर भिन्न तत्त्वरूप मे बनाएल प्रपञ्च कैँ बू सत्य मब अज्ञान।

वस्तुतः जाहि विद्याक द्वारा एकहि महेश्वर भगवान कैँ सर्वव्यापक देखल जाय ओ ज्ञान थिक तथा ओकर विस्तार रूप चौदह विद्याक द्वारा भिन्न-भिन्न तत्त्व देखल जाय ओ विज्ञान कहबैछ।

भारती— मीमांसाक मत मे जगत नित्य ओ वेदक स्वप्रमाणकृत प्रमाणिकताक सिद्धान्त विशिष्ट तथा स्पष्ट अछि मुदा की मीमांसा ईश्वरक तिरस्कार करैछ ?

मण्डन— एहि तरहक धारणा भ्रान्त थिक जे मीमांसा दर्शन इश्वर कैँ तिरस्कार करैछ। वस्तुस्थिति ठीक एकर विपरीत अछि। मीमांसाक प्रधान उद्देश्य अछि कर्मक प्रधानता जे ने क्षणिक पदार्थ मे भए सकैछ आ ने नित्य मे। दृष्टि-फल प्राप्तिक संभावना मे अदृष्ट फलक कल्पना नहि भए सकैछ तथा विधियहु व्यर्थ नहि होइछ। भगवत्कृपाक प्राप्ति जकर कारणमात्र थिक ओ मनुष्यत्त्व एवं मोक्ष कर्म बिना कथमपि नहि उपलब्ध भए सकैछ। अतः मीमांसाक प्रधान उद्देश्य कर्मप्रधान थिक।

(खवासिनीक प्रवेश)

खवासिनी—मालकिन ! हरवाह, जनलोकनि बहुत काल सँऽ बोनिक हेतु बैसल अछि। की कहैत छियैक ?

भारती— अच्छा तँऽ चलऽ हम सब व्यवस्था कऽ दैत छियौह।

(पटाक्षेप)

दोसर अंक

दृश्य : एक

महिष्मती नगरी

(पनिभरिनीक गबैत प्रवेश)

देखु गे माइ हे जोगी एतए कतए,
फिरए गौरी संगे जतए ततए ॥
सिंगी भरि पुरलनि मधुरिमिवानी,
भिषिओ नें लेए जोगी माँगए भवानी ॥
जतए ततए सखि सङ्ग गौरी खेलाए,
ततए ततए नाचए जोगी डामरू बजाए ॥
जोगिआ रंगिआ नितें नितें आवऽ,
परतह कह जोगी गौरी देखावऽ ॥
भन हरिदास महादेव भेस,
गौरी भाग गङ्गराम महेश ॥

(शंकराचार्यक प्रवेश)

(गेरूआ वस्त्र, हाथ मे त्रिशूल, कुशासन, कमण्डल, गरा मे रुद्राक्ष, भाल मे त्रिपुण्ड एवं सिन्दूरक ठोप आ माँथ मुड़ायल)

(शंकर कैँ देखि पनिभरनी स्वतः वजैत अछि)

कुश कमण्डल झोड़ा सङ्ग, कंगन बाहिं गरा रुद्राक्ष ॥
चानन भाल ठोप सुभलाट, पथिक तकै छथि कतक बाट ?

शंकराचार्य—पंडित मण्डन मिश्रक घर जनैत छीयन्हि ?

पनिभरिनी—की अपने परदेशी छी ? ऐहेन के व्यक्ति अछि जे पण्डित मण्डलीक मण्डन स्वरूप मीमांसाक मूर्धन्य मण्डन मिश्र कैँ नहि जनैत हो ?

जाहि दरबाजा पर पिजरा मे बन्द सुग्गा परस्पर विचार करैत हो जगत ध्रुव थिक वा अध्रुव; वेद स्वतः प्रमाण थिक वा परतः प्रमाण; वेदक तात्पर्य सिद्ध वस्तुक प्रतिपादन मे अछि वा साध्य वस्तुक, ओहि दरबाजा कैँ अपने मण्डन मिश्रक बूझब।

शंकराचार्य—अहाँ सेवावृत्ति केनिहाइर छी तखन बिचार शास्त्रक तत्व कैँ कोना जनलियैक ?

पनिभरिनी—शब्द मात्रक सुनला सँ जे बुद्धि उपलब्ध होइछ ओ मनन एवं एकाग्रता सँ चित्त लगेला पर अध्ययन कएल ज्ञानक अपेक्षा अधिक उपयोगी एवं महत्त्वक होइछ। स्वयं श्रुति की एकर प्रमाण नहि थिक ?

शंकराचार्य—पिजड़ा मे बन्द सुग्गाक ज्ञानक उपलब्धिक की कारण भए सकैछ ?

पनिभरिनी— अहू मे शब्दमात्रे कारणस्वरूप थिक। नानादेश देशान्तर सँऽ आयल पण्डितक शास्त्रचर्चा तथा पण्डितजीक पाण्डित्यपूर्ण पारिवारिक संभाषण आदिक श्रवणमात्र सँऽ एहितरहक सुग्गाक उक्ति सहज थिक।

शंकराचार्य—की पण्डितजीक पारिवारिक सम्भाषणो शास्त्रानुकुले होइत छन्हि ?

पनिभरिनी—पण्डितजीक अर्द्धाङ्गिनी भारती साक्षात् सरस्वती थिकीह-ज्ञानक भंडार एवं शास्त्रक स्रोत।

शंकराचार्य—ऐस तँऽ आब हम पण्डितजीक ओहिठाम जाइत छी।

(पटाक्षेप)

Scanned by CamScanner

दृश्य दू

मण्डन मिश्रक भवन

द्वारपाल ठाढ़ छथि)

शंकराचार्य—की मण्डन मिश्र छथि ? ओ की कए रहल छथि ? की हुनका सँऽ भेंट भए सकैत अछि ?

द्वारपाल—पण्डितजी अखन पिताक श्राद्ध कए रहल छथि। अनेकों गण्य-मान्य पण्डित एहि अवसर पर आयल छथि शीखा-सूत्र-हीन व्यक्तिक अहि अवसर पर भीतर जायब निषिद्ध अछि। अतः अपने कोनो आन समय मे अयवाक कष्ट कयल जाय।

(शंकराचार्यक सूक्ष्मरूप सँऽ गृह-प्रवेश)

मण्डनमिश्र—की प्रयोजन अछि ?

शंकराचार्य—विद्वद्वर ! अहि अवसर पर अनेक भिक्षु अपने सँऽ भिक्षा माँगवाक हेतु आयल छथि। हमहु एक भिक्षु छी। हमर भिक्षा शास्त्रार्थ थिक। हमर प्रवल इच्छा अछि जे अपने सँऽ शास्त्रार्थ करी।

मण्डन मिश्र—(सिर सँऽ पाएर धरि देखैत) के शास्त्रार्थ करताह। की अहाँ करब ? अहाँ कोन प्रकृतिक पुरुष छी ?

शंकराचार्य—हम ब्राह्मण कुल मे जन्म ग्रहण कए महाज्ञानी एवं शास्त्र-विशारद् आचार्य सऽ शास्त्राध्ययन कयल। अपने कृपा कऽकए हमरा शास्त्रार्थक भिक्षा प्रदान करी।

मण्डन— हे मुण्डी!—अहाँ कतऽ सँऽ आयल छी?

शंकराचार्य—गला-पर्य्यन्त मुण्डन कयल अछि।

मण्डन— हम अहाँक मार्गक विषय मे पूछि रहल छी।

शंकराचार्य—रास्ता की उत्तर भेल?

मण्डन— की अहाँक माय मुण्डी छथि?

शंकराचार्य—वैह हो! मार्ग कँऽ अपने पूछल और मार्ग अपने कँऽ उत्तर देलक एहिठाम अहाँक माय शब्द हमरा हेतु नहि कहल गेल अछि कारण हम तँऽ मार्ग सऽ पूछल नहि अछि।

मण्डन— की अहाँ शराब पीलहिं अछि?

शंकराचार्य—नहि! नहि! शराब उज्जर होइत छैक। अपने होश मे आबि।

मण्डन— की अहाँ ओकर रङ्ग जनैत छीयैक?

शंकराचार्य—हम ओकर रङ्ग टा जनैत छियैक परन्तु अपने तँऽ ओकर स्वादो सँऽ परिचित छी।

मण्डन— अरे कलंजभोगी! की पागल सँऽ उत्पन्न सदृश उटपटांग बजैत छी।

शंकराचार्य—सत्य कहैत छी! अहाँ सदृश पिता सँऽ कलंजभोगी तँऽ उत्पन्न होइतहि अछि। कारण जेहेन आत्मा होइछ तेहने पुत्र होइत छैक।

मण्डन— रे दुर्मति ! गदहो जाहि कंधाक भार कैँ कठिनता पूर्वक बहन करैछ ओ अहाँ बहन करैत छी। की शीखा ओ जनऊ जे आर्य ओ द्वीजक चिन्ह स्वरूप थिक, दुहू अहाँ कैँ बोझ प्रतीत होइत अछि ?

शंकराचार्य—रे दुर्मति ! जाहि कंधाकैँ अहाँक पिता कठिनता सँऽ बहन करैत छलाह ओहि कधा कैँ हम बहन कए रहल छी। शीखा ओ जनऊक हेतु वेदहिकैँ भार भऽ गेल छैक अर्थात् वेदक अनुसार सन्यासीक हेतु एहि दुहूक आवश्यकता नहि होएत छैक।

मण्डन— धर्म-पत्नी कैँ तँऽ अहाँ अहि उद्देश्य सँऽ छोड़ल जे हुनक पालन-पोषण अहाँ सदृश कायर सँऽ नहि भए सकैछ तथा पुनः शिष्य और पुस्तकक झंझट मे फाँसल छी। बाह रे ब्रह्मज्ञान !

शंकराचार्य—अहाँ सदृश कायर सँऽ गुरुक सेवा नहि भए सकल अतः गुरुकुल सँऽ आबि स्त्रीक टहल करब प्रारम्भ कयल। बाह रे अहाँक कर्मकाण्ड !

मण्डन— अहाँ स्त्रीक गर्भ मे छलौह, स्त्रीक द्वारा पालन-पोषण भेल मुदा स्त्रीयेक निन्दा करैत छी। हद भए गेल अहाँसन मूर्खक कृतघ्नताक !

शंकराचार्य—स्त्रीक योनि सऽ जन्मग्रहण कयल तथा स्त्रीक दूध पील तथा पशु सदृश् स्त्री सङ्ग रमण करैत छी।

मण्डन— अग्निक पूजा नहि करवाक हेतु अहाँ कैँ वीर-हत्याक पाप होयत।

शंकराचार्य—अहाँ परमपद कैँ नहि जनैत छी अतः अहाँ कैँ आत्म-हत्या करबाक पाप होयत।

मण्डन— अहाँ द्वारपाल कैँ धोखा दए चोर जेकाँ किएक अएलहुँ ?

शंकराचार्य—भिखारि कैँ नहि भोजन कराय अहाँ चोर जेकाँ किएक स्वयं भोजन करैत छी ?

मण्डन— हम कर्म-काल मे अहाँसन मूर्ख सँऽ गप नहि करब।

शंकराचार्य—बाह ! बाह ! यतिभङ्ग शब्द बाजि अपने अपन ज्ञान प्रकट कए देल।

मण्डन— जे यति कैँ हटाबऽ चाहैछ ओकरा यतिभङ्ग नहि लगैछ।

शंकराचार्य—वस्तुतः अपने यतिभङ्ग मे प्रवृत छी मुदा पञ्चमी समास करू।

मण्डन— कतऽ ब्रह्म, कतऽ अहाँसन दुबुद्धि, कतऽ सन्यास ओ कतऽ कलियुग। अरे ! ई सब बखेड़ा किछु नहि थिक। अहाँ स्वादिष्ट भोजन मातक निमित्त योगिक वस्त्र धारण कएल अछि।

शंकराचार्य—कतऽ स्वर्ग, कतऽ अपनेसन दुराचारी, कतऽ अग्निहोत्र तथा कतऽ कलियुग। अरे ! ई सब बखेड़ा किछु नहि थिक। अपने स्त्री संभोग मात्रक उद्देश्य सँऽ कर्मकाण्डक आवरण धारण कएल अछि।

मण्डन— अहाँक वैराग्य विचित्र अछि। की एहि प्रकारक वैराग्य सऽ सन्यास ग्रहण करबाक अधिकार प्राप्त भए सकैछ ? अहाँ संसारक कर्मक्षेत्र मे बिना अवतीर्ण भेने वैरागी कोना

भए गेलौंह ? बिना वैराग्यक सन्यास धारण करब वञ्च-नामात्र की नहि थिक ?

शंकराचार्य—वेद मे कहल गेल अछि जे कर्मक द्वारा परमज्ञानक प्राप्ति होइछ जे प्रकृतितः ब्रह्मज्ञ ब्राह्मण छथि ओ विचार-बुद्धि द्वारा स्वर्गादिलोकक परीक्षाक उपरान्त वैराग्य पथक अवलम्बन करबा मे समर्थ होइत छथि। शास्त्रक परामर्श अछि जे जखन संसार सँ वैराग्य उत्पन्न भए जाय तखन सन्यासी भऽ जेबाक चाही। अहि तरहक ज्ञानी पुरुष ब्रह्मचर्याश्रम, गृहस्थाश्रम तथा वानप्रस्थाश्रमक परित्याग कैँ सन्यास ग्रहण कए विशुद्ध आत्मतत्त्वक हेतु प्रवृत होइछ। संसारिक धर्म, कर्म तथा धन-संग्रह मे मोक्षक उपलब्धि नहि भए सकैछ। मोक्ष एकमात्र त्याग-पथक अनुसरण मात्रे सँऽ प्राप्ति भए सकैछ। संसार त्यागी परिव्राजक प्रकृत योगी महापुरुष होइछ। परिव्राजक वर्ण-भेद-हीन, वस्त्रहीन, मुण्डित-मस्तक भेला सँऽ स्वच्छन्द इच्छानुसार भ्रमण करैछ। ओ पुरुष विवाहादि बन्धन मे आबद्ध नहि रहैछ। ओहि पुरुषक हेतु शीखा ओ जनऊ धारण करब अनावश्यक होइछ। ब्रह्मनिष्ठ-सन्यासक अवलम्बन केला सँऽ ब्रह्म-ज्ञानक प्राप्ति होइछ। अतः अपनेक उग्र होयब अनुचित थिक। हम यथार्थ ब्रह्मज्ञानक हेतु सन्यास धारण कएल अछि।

मण्डन— तँऽ बेस हम अहाँ सँऽ शास्त्रार्थक हेतु तत्पर छी मुदा तर्कक समय अनेक गूढ़ प्रश्न उपस्थित होइछ अतः तथ्यातथ्यक निर्णयक हेतु मध्यस्थताक आवश्यकता होइछ।

जैमिनि— मण्डन मिश्रक धर्म-पत्नी भारती साक्षात् सरस्वती अवतार छथि। भारतीक श्रुति ओ शास्त्रक विचार, गूढ़

तत्त्वक समाधानक निपुणता, तेजस्वीता एवं पाण्डित्य अपूर्व पाओल जाइछ ।

शंकराचार्य--यथार्थतः हम प्रसन्न छी भारतीक मध्यस्थता पर जे भारतीय नारीक मर्यादा एवं पाण्डित्यक आदर्श स्वरूप मानल जायत ।

(पटाक्षेप)

दृश्य : तीन

शास्त्रार्थ भवन

(मण्डनमिश्र, शंकराचार्य तथा आन पण्डित लोकनिक मध्य। भारती एक आसन पर मध्यस्थ रूप मे बैसल छथि।)

शंकराचार्य—एहि जगत में ब्रह्म एक, सत्चित्र, निर्मल तथा यथार्थ वस्तु छथि। ओ स्वयं एहि जगतक रूप मे ओहि तरहें भासित होइत छथि जेना सीप चाँदीक रूप धारण कए भासित होइत अछि। सीप मे चाँदी जेकाँ ई जगत मिथ्या थिक। ब्रह्मक ज्ञान सँऽ एहि प्रपञ्चक नाश होइछ तथा जीव वाह्य पदार्थ सँऽ हंटि अपन विशुद्ध रूप मे प्रतिष्ठित होइत अछि। एहि समय मे ओ जन्म मरण सँऽ रहित भए मुक्त भऽ जाइछ। ई हमर सिद्धान्त थिक तथा एहि मे स्वयं उपनिषदे प्रमाण थिक। यदि हम एहि शास्त्रार्थ मे पराजित भेलहुँ तँऽ सन्यासीक काषाय वस्त्र कैँ फेकि गृहस्थक स्वेत वस्त्र कैँ धारण करब। अहि विवाद मे जय-पराजय स्वयं भारती करथि।

मण्डन— वेदक कर्मकाण्ड भाग प्रमाण थिक। हम उपनिषद कैँ प्रमाण कोटि मे नहि मानैत छी। उपनिषद चैतन्यस्वरूप

ब्रह्मक प्रतिपादन कए सिद्ध वस्तुक वर्णन करैत अछि। वेदक तात्पर्य थिक विधिक प्रतिपादन करब मुदा उपनिषद विधिक वर्णन नहि कए ब्रह्मक स्वरूपक प्रतिपादन करैत अछि। अतः उपनिषद प्रमाण कोटि मे कथमपि नहि आबि सकैछ। शब्दक शक्ति कार्यमात्र कैँ प्रकटक हेतु होइछ। दुःख सँऽ मुक्ति कर्म सँऽ होइछ तथा कर्मक अनुष्ठान मनुष्य मात्र कैँ जीवन भरि करक चाही। मीमांसक भेला सँऽ हमर ई प्रतिज्ञा थिक। यदि एहि शास्त्रार्थ मे हमर पराजय भेल तँऽ गृहस्थ धर्म कैँ छोड़ि सन्यास मार्गक अनुसरण करब।

भारती-— विद्वद्गण ! वादी एवं प्रतिवादीक तर्कपूर्ण उत्तर-प्रतिउत्तर अल्पकालक विषय नहि भए सकैछ। हमरा स्वयं अपन घरक कार्य आदिक व्यवस्था करक अछि अतः हम ई दुहू मालावादी एवं प्रतिवादीक गरदनि मे पहिरा दैत छियन्हि। जनिक माला मुरझा जायत ओ शास्त्रार्थ मे पराजित बुझना जयताह।

मण्डन— जीव ब्रह्म थिक वाक्य सँऽ आत्मा ओ परमात्माक एकता कोना मानल जा सकैछ ? एहि एकताक ने तँऽ प्रत्यक्षहि ज्ञान अछि आ ने एकर अनुमाने होइछ। प्रत्यक्ष तँऽ अभेदवादक महान विरोधी अछि हर व्यक्तिक प्रतिदिनक अनुभव थिक जे ओ व्यक्ति ईश्वर नहि थिक। अतः प्रत्यक्ष विरोधी भेला सँऽ एहि वाक्यक प्रयोजन जीव-ब्रह्मक एकता सिद्ध करबा मे नहि अछि।

शंकराचार्य—ई विचार उचित नहि कियैक तँऽ इन्द्रीक द्वारा जीव ओ परमात्मा मे भेदक ज्ञान कथमपि नहि होइछ। प्रत्यक्षक

ज्ञान विषय ओ इन्द्रियक सन्निकर्ष पर अवलम्बित रहैछ। इन्द्रिय कैँ तँऽ ईश्वरक सङ्ग कखनहुँ नहि होइछ तखन विरोधक प्रसङ्ग कतऽ अछि ?

मण्डन— जीव अल्पज्ञ ओ ब्रह्म सर्वज्ञ छथि। अल्पज्ञ ओ सर्वज्ञक एकता मानब प्रत्यक्ष रूप में अनुचित की नहि थिक।

शंकराचार्य— एहि सिद्धान्त मे अपनेक त्रुटि अछि। प्रत्यक्ष तथा श्रुति मे कोनो विरोध नहि भऽ सकैछ। दुहूक आश्रय भिन्न-भिन्न अछि। प्रत्यक्ष प्रमाण अविद्या सँऽ युक्त जीव मे ओ माया सऽ युक्त ईश्वर मे भेद प्रदर्शित करैछ। श्रुति अविद्या ओ माया सँऽ रहित शुद्ध चैतन्य रूप आत्मा ओ ब्रह्म मे अभेद प्रकट करैछ। अतः प्रत्यक्षक आश्रय कलुषित जीव तथा ईश्वर सँऽ अछि ओ श्रुतिक आश्रय विशुद्ध आत्मा एवं ब्रह्म थिक। एक आश्रय मे विरोध भऽ सकैछ मुदा विभिन्न आश्रय भेला सँऽ कोनो तरहक भेद लक्षित नहि होइछ। अतः प्रत्यक्ष प्रमाण सँऽ अभेद श्रुतिक कोनो तरहक विरोध नहि भेला सँऽ तिरस्कृत कथमपि नहिं भए सकैछ।

मण्डन— यति महाराज ! प्रत्यक्षक तँऽ अपने खण्डन कएल मुदा अनुमान श्रुति कैँ बाधित करैत अछि। जीव सर्वज्ञ नहि थिक। अतः जीव ब्रह्म सँऽ एहि प्रकारे भिन्न अछि जाहि प्रकारें सर्वज्ञ नहि भेला कारण सँऽ साधारण नर ब्रह्म सँऽ भिन्न अछि। एहि तरहक अनुमान जीव ओ ब्रह्मक एकता कैँ अप्रमाणिक मानबा मे पर्याप्त बुझना जाइछ।

शंकराचार्य—पण्डितप्रवर ! अपने पहिने ई तँऽ कहू जे जीव ओ ब्रह्म मे जाहि भेद कैँ सिद्ध कऽ रहल छी ओ पारमार्थिक थिक वा काल्पनिक असत्य ? जँऽ ई भेद सम्पूर्ण सत्य थिक

तँऽ अपनेक दृष्टान्त ठीक नहि प्रतीत होइछ-वा यदि काल्पनिक थिक तँऽ हम स्वीकारे कए रहल छी तखन प्रमाणक प्रयोजने की ?

मण्डन — ठीक अछि ! हमर अनुमान भने युक्तिसंगत नहि हो मुदा भेद प्रतिपादन केनिहारि श्रुतिक सङ्ग 'तत्त्वमसि' श्रुतिक विरोध तँऽ स्पष्ट अछि जे अद्वैतवाद श्रुतिक तात्पर्य कथमपि नहि मानल जा सकैछ। की अपने अहि मंत्रक तथ्य पर विचारल अछि—

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया,
समान वृक्षं परिषस्वजाते।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्ति,
अनश्ननन्यो अभिचाकशीति ॥

एहि मन्त्र मे स्पष्ट रूप मे जीव एवं ईश्वर मे भेद पाओल जाइछ। जीव कर्म-फलक भोक्ता थिक और ईश्वर कैँ कर्मफल सँऽ लेशो मात्र सम्बन्ध नहि बुझना जाइछ।

शंकराचार्य—जीव ओ ब्रह्मक एहि तरहक भेद प्रतिपादन निष्फल थिक। एहि ज्ञान सँऽ ने तँऽ स्वर्गक प्राप्ति भए सकैछ आ ने अपवर्गक। एहि भेद कैँ निष्फल भेनहुँ हम मानबाक हेतु तत्पर छी मुदा पूर्व निर्दिष्ट श्रुति वाक्य मे बुद्धि ओ पुरुषक भेद देखाओल गेल अछि जीव ओ ईश्वरक नहि। श्रुतिक उक्ति थिक जे कर्मफल कैँ भोगनिहारि बुद्धि थिक। पुरुष एहि सँऽ भिन्न अछि। अतः पुरुष कैँ सुख-दुःख भोगवाक फलाफल कथमपि प्राप्त नहि होइछ।

मण्डन— एहि नवीन अर्थक हम विरोध करैत छी। बुद्धि जड़ तथा भोक्ता चेतन पदाथ थिक। एहि अवस्था मे पूर्व

मन्त्र बुद्धि सदृश् जड़ पदार्थ कैँ भोक्ता मानवाक प्रसङ्ग मे कोनो विद्वान तत्पर नहि भए सकैछ। अतः उक्त श्रुतिक अभिप्राय जीव ओ ईश्वरक भेद देखवै मे पाओल जाइछ।

शंकराचार्य—अपनेक आक्षेप उचित नहि। 'पैङ्गय रहस्य' नामक ब्राह्मण ग्रंथ मे स्पष्ट अछि जे बुद्धि कर्मफल कैँ भोगैछ तथा जीव साक्षीमात्र रहैछ। जखन ब्राह्मण ग्रंथक एहि तरहक व्याख्या अछि तँऽ स्पष्ट रूप मे उक्त वाक्यक अभिप्राय बुद्धि ओ जीवक भिन्नता देखेवा मे पाओल जाइछ।

मण्डन— ब्राह्मण वाक्यक अर्थ तँऽ ई अछि जे जाहि द्वारा स्वप्न देखल जाइछ ओ सत्त्व तथा जे शरीर मे साक्षी भए रहैछ ओ क्षेत्रज्ञ थिक। मुदा एहि अर्थ पर ध्यान नहि दए मीमांसाक कहब अछि जे सत्त्व शब्दक अर्थ स्वप्न तथा दर्शन क्रिया कैँ केनिहार जीव थिक तथा क्षेत्रज्ञक अर्थ स्वप्न कैँ देखनिहार सर्वज्ञ ईश्वर थिकाह।

शंकराचार्य—एहि तरहक अर्थ कथमपि नहि भए सकैछ। सत्त्व दर्शनक कर्त्ता नहि कारण थिक अर्थात एहि वाक्यक अर्थ जीव नहि भए बुद्धि होइछ तथा क्षेत्रज्ञक सङ्ग शरीर विशेषण भेला सँऽ एहि वाक्यक अर्थ जीव होइछ जे शरीर मे निवास करैछ, ईश्वर नहि।

मण्डन— ठीक अछि! एहि श्रुति कैँ छोड़ू। कठोपनिषद्क एहि प्रसिद्ध श्रुति पर तँऽ विचार कएल जाय जे जीव तथा ईश्वर मे छाया ओ आतपक भेद जकाँ स्पष्ट भेद स्वीकार करैत अछि।

ऋतं पिबन्तौ सुकृतस्यलोके,
गुहां प्रविष्टौ परमेपरार्धे।

छायातपौ ब्रह्मविदोवदन्ति,
पञ्चाग्न्यो ये च त्रिनाचिकेताः ॥

शंकराचार्य—यथार्थ ! मुदा इहो श्रुति हमर अद्वैत सिद्धान्त मे बाधक नहि होइत अछि। ई तँऽ लोकसिद्ध भेदक प्रतिपादन मात्र करैत अछि। सत्य तँऽ ई थिक जे अभेद प्रतिपादक श्रुति नवीन अर्थ प्रकट करैछ जे लोक मे सिद्ध नहि बुझि पड़ैछ। अतएव ई अधिक प्रबल अछि। भेद तँऽ जगत मे सर्वत्र देखल जाइछ अतः ई सिद्ध करबाक श्रुति कथमपि नहि प्रयास करैछ कियैक तँऽ श्रुति सतत् अपूर्व वस्तुक वर्णन मे निरत रहैछ। ई अपूर्व वस्तु अभेदक प्रतिपादक थिक, भेदक वर्णन नहि।

मण्डन— यतिमहाराज ! हमरा बुद्धि मे तँऽ भेद प्रतिपादन केनिहारि श्रुति दुहू मे पराक्रमी अछि किएक तँऽ ओ अन्य प्रमाणक द्वारा पुष्ट कएल जाइछ।

शंकराचार्य—श्रुतिक पराक्रमक प्रसङ्ग मे अपने पूर्णरूप सँऽ विचार नहि कएल अछि। श्रुतिक प्रबलताक विषय मे सिद्धान्त अछि जे अन्य प्रमाणक द्वारा जँऽ श्रुतिक पुष्टि होइछ तँऽ ओ प्रवल नहि होइछ। किएक तँऽ ओहि प्रमाणक द्वारा अर्थ अभिन्न भेला सँऽ ओ श्रुति अत्यन्त दुर्वल मानल जाइछ। प्रवल श्रुति तँऽ ओ थिक जे प्रत्यक्ष तथा अनुमानक द्वारा अप्रकट अर्थ कैँ प्रकट करैछ। पदार्थक परस्पर विभिन्नता—जकरा अपने एतेक अभिनिवेशक सङ्ग सिद्ध कए रहल छी—जगत मे सर्वत्र देखल जाइछ। अतः ओकर प्रतिपादन केनिहारि श्रुति दुर्वल भए जाइछ। अभेद तँऽ जगत-मध्य कतहु देखल नहि जाइछ। अतएव ओकर वर्णन केनिहारि

श्रुति पूर्वक अपेक्षा अधिक प्रबल भए जाइछ। एहि कसौटी पर कसला सँऽ 'तत्वमसिक' अभेद प्रतिपादनहि श्रुतिक प्रतिपाद्य विषय प्रतीत होइछ। अतः एहि वाक्यक अर्थ जीव ओ ब्रह्मक एकता मे आछ जकर विरोध ने तऽ प्रत्यक्ष सँऽ अछि आ ने अनुमान सँऽ आ ने श्रुति सँऽ।

प्राबल्यमापादयतिश्रुतीनां,
मानान्तरं नैव बुधाग्र यायिन्।
गतार्थतादानमुखेन तासां,
दौर्बल्य सम्पादकमेवकिन्तु॥

भारती— यतिमहाराज! मिश्रजीक गराक मलीन माला मिश्रजीक पराजयक सूचना दैत अछि तथा यति महाराजक जय। अतः आब अपनेलोकनि भिक्षार्थक कष्ट कएल जाय।

मण्डन— यतिमहाराज! हम अपन पराजय तँऽ सहर्ष स्वीकार करैत छी मुदा आश्चर्य तँऽ एहि हेतु अछि जे जैमिनी जे भूत तथा भविष्य कैँ जनैत छथि तथा जनिक जीवनक उद्देश्यमात्र छन्हि वेदक अर्थक प्रचार, ओ एहि तरहक सूत्रक रचना किएक केलन्हि जकर अर्थ यथार्थ नहि होइछ?

शंकराचार्य—पण्डितप्रवर! जैमिनिक सिद्धान्त मे कतहु अपसिद्धान्त नहि अछि। अनभिज्ञ हेवाक कारणे हमरहि लोकनि हुनक अभिप्राय कैँ यथार्थरूप मे नहि बुझि सकलौंह। कर्म मीमांसाक आदि आचार्यक अभिप्राय परमब्रह्मक प्रतिपादने मे अछि मुदा ओहि प्राप्तिक साधन मात्रक हेतु ओ कर्मक सिद्धान्त कैँ एतेक महत्व प्रदान कएलन्हि। कर्मक द्वारा चित्त शुद्धि होइछ तथा चित्त शुद्धिये ब्रह्मज्ञान कैँ प्राप्ति मे

सहायक होइछ। कर्म मीमांसा मे एहि हेतु कर्मक स्थान एतेक महत्वपूर्ण राखल गेलैक अछि।

मण्डन— जँऽ समस्त वेद ईश्वर कैँ कर्मफलक दाता मानैत अछि तँऽ परमात्मा सँऽ भिन्न कर्मे फल देनिहार थिक एहि सिद्धान्तक प्रतिपादन कैँ जैमिनी मुनि ईश्वरक निराकरणो किएक केलन्हि ?

शंकराचार्य—नैयायिकक मत अछि जे एहि जगतक कर्त्ता स्वयं परमेश्वर छथि। एहि अनुमानक आधार पर ओ ईश्वरक सत्ता सिद्ध करैत छथि। मुदा ई अनुमान की ईश्वर-सिद्धिक हेतु पर्याप्त अछि ? श्रुतिक तऽ स्पष्ट कहब अछि जे ब्रह्म उपनिषदक द्वारा गम्य अछि। वेदक ज्ञाता पुरुष ब्रह्म कैँ जानि सकैछ। कतेको अनुमान कएल जाए परञ्च ब्रह्मक ज्ञान नहि भए सकैछ। एहि भाव कैँ मनमे राखि जैमिनी मुनि ईश्वर परक अनुमानक तथा ईश्वर सँऽ जगतक उदयक सिद्धान्तक युक्तिक द्वारा खण्डन केलन्हि। ओ श्रुतिक द्वारा प्रतिपाद्य ईश्वरक कतहु नहि खण्डन केलन्हि। अतः कर्मीमांसा कैँ उपनिषद सँऽ कोनो तरहक विरोध नहि अछि।

जैमिनि— (मण्डन सँऽ) विद्वद्वर! अपने हिनका नहि चीन्हल। ई किओ साधारण व्यक्ति नहि छथि। सत्ययुग मे कपिल रूप मे सांख्य शास्त्रक, त्रेता मे दत्तात्रेय रूप मे योग शास्त्रक तथा द्वापर मे वेदव्यासक रूप मे वेदान्त दर्शनक प्रचार हिनके सँऽ भेल। नीक छल जे अपने हिनक शरण मे जाइ। ई स्वयं अपनेक ओहिठाम आएल छथि। धन्य अपनेक पाण्डित्य जे एखन धरि हिनको हैरान कए देलक। आब

अपने हिनक शिष्यत्व ग्रहण कए सनातन धर्मक रक्षा मे तत्पर भए जाए जाहि हेतु भगवान शिव शंकराचार्य रूप मे अवतरित भेल छथि तथा अपनहुँ कोनो साधारण पुरुष नहि साक्षात् ब्रह्मक अवतार छी जे महज एहि कार्यक निमित्त भेल अछि।

(दुहू एक दोसरा कैँ आलिंगन करैत छथि)

(पटाक्षेप)

दृश्य : चारि

शंकराचार्य, मण्डनमिश्र बैसल छथि

मण्डन— यतिराज ! हम अपन पराजय स्वीकार करैत छी तथा सन्यासक मार्गक दीक्षाक आग्रह करैत छी ।

(भारतीक प्रवेश)

भारती— यतिराज ! सम्पूर्ण पराजयक बिना शास्त्रार्थक शर्तक पालन अनुचित होइछ ।

मिश्रजीक आधा अङ्ग पराजित अछि मुदा आधा अपराजित । शास्त्रानुसार स्त्री पुरुषक अर्द्धाङ्गिनी होइछ । अतः हमरा शास्त्रार्थ मे पराजय केने बिना मिश्रजी कैँ सन्यासक दीक्षा देवाक अपने कैँ कोनहु अधिकार नहि अछि ।

शंकराचार्य—हम अहाँक सङ्ग शास्त्रर्थ करवाक हेतु उद्यत नहि छी । यशस्वी पुरुष नारी सङ्ग कथमपि वाद-विवाद नहि करैत छथि ।

भारती— हम अपनेक सिद्धान्त स्वीकार करवाक हेतु तैयार नहि छी । अपन मतक रक्षाक हेतु प्रत्येक व्यक्ति चेष्टा करैत अछि

चाहे ओ स्त्री हो आ पुरुष, जं ऽ मतक रक्षा अभिष्ट रहैछ। की अपने महर्षि याज्ञवल्क्य ओ राजर्षि जनकक दृष्टान्त कैं बिसरि गेल छी जे अपन पक्षक रक्षाक हेतु क्रमशः गार्गी तथा सुलभी सँऽ शास्त्रार्थ केलन्हि ? की स्त्री सँऽ शास्त्रार्थक हेतु ओ लोकनि यशस्वी नहि भेलाह ?

शंकराचार्य--तँऽ ठीक अछि। हम अहाँ सङ्ग शास्त्रार्थक हेतु तत्पर छी।

भारती— यतिराज! जँऽ ब्रह्म निष्क्रय छथि एवं कर्मफल भोगवाक इच्छो नहि रखैत छथि तँऽ एतेक विशाल ब्रह्मांडक रचना कोना होइछ ?

शंकराचार्य—ब्रह्म स्वाधीन, स्वतन्त्र तथा स्वेच्छामय छथि। अतः ब्रह्मक इच्छामात्रे सऽ सृष्टिक रचना होइछ।

भारती-- तखन तँऽ ब्रह्मो इच्छापाश मे बँधि गेला सँऽ स्वाधीन नहि छथि ?

शंकराचार्य—नहि ! नहि ! ओ इच्छा ब्रह्मक इच्छा थिक जे साधारण अविद्याक इच्छा सँऽ पृथक होइछ। अतएव ब्रह्म इच्छा कएनहुँ पर इच्छापाश मे नहि बाँधल जाइछ।

भारती-- खैर, मानल जे इच्छा कएलो पर ब्रह्म अविकारी छथि मुदा जखन अपने जीव ओ ब्रह्म मे भेद नहि मानैत छी तथा अपने ब्रह्मक पूर्ण पारखो सेहो छी, तऽ इच्छाक संयोग सँऽ ब्रह्म वृत्त मे किछु विकार अवश्य होइछ। जँऽ अपने ऐना नहि मानैत छी, तँऽ सृष्टिक उत्पन्न ओ प्रलय मे भेद नहि बुझि पड़ैछ। जँऽ अविद्याकृत भेद अछि तँऽ ओ अविद्यो ब्रह्म-

कर्त्तृत्व सँऽ भिन्न नहि अछि। आब कहल जाए जे इच्छाक संयोग-वियोग सँऽ ब्रह्मवृत्ति मे केहेन बिकार होइछ जाहि सँऽ सृष्टिक उत्पत्ति तथा नाश होइछ। एहि वाक्य मे—

कलाः कियन्त्यो वद पुष्पधन्वनः।
किमात्मिकाः किञ्च पदं समाश्रिताः॥
पूर्वे च पक्षे कथमन्यथास्थितिः।
कथं युवत्यां कथमेप पूरुषे॥

कहल गेल कामक कतेक कला, केहेन स्वरूप, अछि तथा कोन स्थान पर निवास करैछ? शुक्लपक्ष एवं कृष्णपक्ष मे कामक स्थिति समान रहैछ अथवा भिन्न-भिन्न तथा पुरुष ओ युवती मे एहि कलाक निवास कोन प्रकारे होइछ?

शंकराचार्य—देवी! अहाँक प्रश्न शास्त्रानुकूल नहि अछि तथा काम शास्त्र सँऽ सम्बन्ध रखैछ।

भारती— भगवन! गृहस्थ धर्महि पर प्रत्येक धर्म आधारित अछि। गृहस्थ धर्म कैँ सुचारु पूर्वक संपादनक हेतु कामशास्त्रक ज्ञान परमावश्यक होइछ। भिन्न-भिन्न शास्त्र मध्य काम शास्त्रोक स्थान पाओल जाइछ। पाण्डित्य सर्वशास्त्रक अध्ययनक ज्ञान मे पाओल जाइछ।

शंकराचार्य—देवी! अहाँ जनैत छी जे हम तँऽ गृहस्थ नहि छी।

भारती— मानल! अपने गृहस्थ नहि छी। एहि मे हमर कोन दोष। एहि हेतु तँऽ यतिराजक माता-पिता दोषी रूप मे मानल जा सकैत छथि जे अपन पुत्र कैँ विवाह दान नहि करओलन्हि

शंकराचार्य—तँऽ ठीक अछि। हमरा एहि प्रश्नक उत्तरक हेतु एक मास क अवधि देल जाय।

भारती— यथा इच्छा।

(पटाक्षेप)

तेसर अंक

दृश्य : एक

राजा अमरुकक राजधानी

(राजा अमरुकक मृतक शरीर पृथ्वी पर पड़ल अछि। रानी कनैत तथा मन्त्री लोकनि शोकाकुल छथि)

(नेपथ्य मे गाओल जाइछ)

शान्त स्वभाव नितान्त गहत तत
यद्यपि कृतान्त कठोर।
ककरो शक्य नहि अछि जग
सभ अछि बाँधल कर्मक डोर॥
निर्धन सधन किओ नहि थिर रह
कालक हाथ बिकाय।
राजा रङ्क पण्डित ज्ञानी सभ
एकहि भाव लखाय॥
हाड़ चाम नामहि सँऽ जग मे की
भेल पुरुष कहाय?
वेद पुराण प्रसिद्ध महाशय सभ गेल
भूमि समाय॥

(पटपरिवर्त्तन)

(शंकराचार्य सनन्दन आदि शिष्यक संग एक पहाड़ पर बैसल छथि)

शंकराचार्य—सनन्दन ! समस्त इच्छाक मूल संकल्प सँऽ पृथक अत्यन्त दूर जा रहल छी। भारतीक प्रश्नक उत्तरक कतहु अध्ययनक जोगार नहि। कामशास्त्रक आचार्य तँऽ प्रायः जगत मध्य नहि पाओल जाइछ। कामकला प्रवीन स्त्रीक सहवासक बिना एहि शास्त्रक ज्ञान असम्भव बुझना जाइछ जे बाल-ब्रह्मचारीक हेतु महज कठिन थिक। तखन गृहस्थ बनि स्त्रीक सहवास सँऽ एहि शास्त्रक अध्ययन केला सँऽ संकल्पक पूर्त्ति नहि होइछ। भारतीक वाक्पटुता, गूढ़ अध्ययन एवं शास्त्रीय निपुणता असाधारण अछि। बुझना जाइछ शंकराचार्यक पराजय एवं भारतीक जय अवश्यम्भावी अछि।

सनन्दन ! अपूर्व दृश्य। राजा अमरुकक स्वर्गवास। सुन्दरी रानीक विलाप, मन्त्री लोकनिक व्याकुलता आदि की देखैत छी ? किएक नहि एहि राजाक मृत-शरीर मध्य प्रवेश कैँ राजाक सुन्दरी रानी सँऽ कामशास्त्रक व्यावहारिक शिक्षा ग्रहण कएल जाय ?

सनन्दन— भगवन ! हम जनैत छी परकाय—प्रवेश करबाक विद्या सँऽ योगीगण अलौकिक चमत्कार देखेलन्हि अछि मुदा की सन्यासी कैँ एहि मे प्रवृत्त हेवाक चाही ? कतऽ तँऽ हमर ई अनुपम सन्यास व्रत ओ कहाँ ई अति निन्दनीय कामशास्त्र ! अपने जँऽ कामशास्त्रक चर्च करब तँऽ जगत मे अत्यन्त अव्यवस्था आबि जाएत तथा भूमण्डल सँऽ सन्यास धर्म सदाक हेतु उठि जाएत जाहि हेतु अपने

संकल्प केने छी। अतः हमरा विचारे ई परकाय प्रवेश नितान्त अनुचित थिक।

शंकराचार्य—सनन्दन ! अहाँक वचन सद्भाव सँ प्रेरित अछि मुदा एहि तथ्यक वाह्य अङ्गमात्रहि पर अहाँक दृष्टि पड़ल अछि। एकर अन्त स्थल मे अहाँ प्रवेश नहि केलहुँ अछि। अहाँ जनैत छी जे समस्त इच्छाक मूल संकल्प थिक। संसार के हेय दृष्टि सँ देखनिहार पुरुष यदि कोनहु कार्यक कर्त्ता हो तँ ओहि सँ की ? ओकरा हृदय मे संकल्पक नितान्त अभाव रहैछ। ओहि पुरुष कैँ संसार कखनहुँ बन्धन मे नहि राखि सकैछ जे एहि संसार कैँ सम्पूर्ण रूप सँ कल्पित ओ असत्य बुझैत अछि। ओहि पुरुष कैँ कर्मक फल कोनहुँ प्रकारें लिप्त नहि कए सकैछ। कर्मक फल तँ हुनका प्राप्त होइत छन्हि जे एहि कर्म कैँ करबाक अहङ्कार राखैत छथि। मुदा ज्ञानक द्वारा जँ अहङ्कार ओ बुद्धि नष्ट भए जाइछ तँ कर्त्ता कैँ कोनहु प्रकारक फल नहि प्राप्त होइछ। जँ ओ ब्रह्म-हत्या सदृश पापो करैछ तखनहुँ ओ ओहि पाप सँ लिप्त नहि होइछ तथा यदि ओ हजारो अश्वमेध यज्ञ करैछ तखनहुँ ओ पुण्य प्राप्त नहि कए सकैछ। ऋग्वेदक ओ दृष्टान्त की अहाँ कैँ स्मरण नहि अछि जे ब्रह्मज्ञानी संकल्प-रहित इन्द्र त्वष्टाक पुत्र त्रिशिरा विश्वरूप कैँ मारि ओ हुनक भेड़ी कैँ मारि मुनि लोकनि कैँ भोजनक हेतु देलन्हि मुदा एहि कर्मक हेतु हुनका किछु नहि भेलन्हि। जनक अनेक यज्ञ केलन्हि, हजारों टका दक्षिणा रूप मे ब्रह्मण कैँ देलन्हि मुदा ओ अभय ब्रह्म कैँ प्राप्त केनिहार राजर्षि छलाह अतः ऐहेन सत्कर्मक फल हुनका हेतु किछु नहि भेल। ब्रह्मवेत्ताक एहि तरहक तँ महिमा थिक। संकल्पक

विनाशक तँऽ एहि तरहक प्रभाव होइछ जे सुकृत ओ दुष्कृतक फल कर्त्ता कैँ थोड़बोक स्पर्श नहि करैछ। हम वासनाहीन छी। हमरा हृदय मे काम वासनाक लेशोमात्र अवशिष्ट नहि अछि। अतः हमर परकाय प्रवेश शास्त्रतः कामशास्त्रक अध्ययन मात्र कथमपि निन्दनीय नहि थिक। अतएव एहि कार्य सँऽ हमरा विरक्त जनु कए प्रत्युत एहि अनुष्ठान कैँ सुगम बनाउ।

सनन्दन— यथा भगवनक इच्छा।

शंकराचार्य—सनन्दन! अहि पहाड़क गुफा मध्य रहि अहाँ लोकनि एक मास धरि हमर शरीर कैँ यत्नपूर्वक रक्षा करब तावत हम अहि राजाक मृतक शरीर मे प्रवेश कए काम कलाक अनुभव प्राप्त करैत छी।

सनन्दन आदि शिष्य लोकनि—यथा आज्ञा।

(पटाक्षेप)

दृश्य : दू

पहाड़क गुफा

(शंकराचार्यक शरीरक रक्षा करैत शिष्य मण्डली)

एक शिष्य—सनन्दन जी ! एक मासक अवधि तँऽ आब सन्निकट अछि मुदा गुरुदेवक अतहु पता नहि पाओल। संकल्पक तँऽ विनाश अछिये सङ्गहि जगत सँऽ सन्यास धर्मक अन्त सेहो प्रतीत होइछ।

सनन्दन—गुरुदेव कैँ ताकबाक प्रबन्ध हेबाक चाही। अतः हमरा लोकनि मे सँऽ तँऽ किछु गुरुदेवक शरीरक रक्षाक यत्न करथि तथा किछु गोटे मरा संगे राजा अमरुकक राजधानीक यात्रा करथि जतए गुरुदेव परकाय प्रवेश केने छथि।

शिष्य— तँऽ ठीक अछि अपने आज्ञा प्रसारित करी तथा हमरा लोकनि तदनुसार कार्य करब।

(राजा अमरुकक राजधानी। महामन्त्री तथा आन व्यक्ति बैसल छथि। सनन्दनक संग गवैयाक रूप मे शिष्य लोकनिक प्रवेश)

(पटाक्षेप)

सनन्दन— (महामन्त्री सँऽ)—महामन्त्री जी ! सुनल अछि श्रीमान् गान विद्याक बड़ प्रेमी छथि अतः हमरा लोकनि दूर देश सऽ एहि प्रयोजने आयल छी जे श्रीमान् महाराजाधिराज सँऽ अपने एहि प्रसङ्ग मे निवेदन कए सकैत छियन्हि ?

महामन्त्री—ठीक अछि । अहाँ लोकनि अतिथिशाला मे विश्रम करू। हम श्रीमान् सँऽ निवेदन कए एहि प्रसङ्ग में उचित प्रबन्ध कए दैत छी ।

सनन्दन— अच्छा तँऽ अपने कैँ धन्यवाद ।

(पटपरिवर्त्तन)

दृश्य : तीन

अमरुकक राजभवन

(राजा अमरुक पुनर्जीवित भए जाइछ)

अमरुक— अहाँ लोकनि एहि तरहें विषभित किएक छी ? तथा एहि भीर-भारक की प्रयोजन अछि ?

रानी— नाथ ! भगवानक कृपा। अहाँ पुनः जीवन प्राप्त कयल तथा हमरा लोकनि वैधव्यक महादुःख सँऽ मुक्ति पाओल।

(मन्त्री सँऽ)

अमरुक—मन्त्री प्रवर ! निश्चय एहि मे इश्वरेच्छाक प्राबल्य पाओल जाइछ। राज्यक व्यवस्था नियमानुसार हो तथा प्रजाक सुख, शान्ति एवं समृद्धिक समुचित प्रबन्ध कएल जाय।

मन्त्री— यथा आज्ञा।

(मन्त्री प्रस्थान करेत छथि)

(रानी सँऽ)

अमरुक— प्रिये ! नारी पुरुष कैँ बान्हि कैँ राखए चाहैछ मुदा पुरुष स्वतन्त्र भए मुक्त पक्षी सन उड़ब पसन्द करैछ।

रानी— नाथ ! महज प्रेमहि नारी जीवनक निधि होइछ जकरा पावि ओकरा कोनो आन वस्तुक आकंक्षा नहि रहैछ। नारीक भावुक हृदय मे ममता ओ स्नेह, अहिंसा ओ करुणा, विश्वास ओ उदारता, सेवा ओ त्याग एवं दया ओ क्षमामय भावक समन्वय पाओल जाइछ जे नारीक सौंदर्य मे ज्योत्सनाक प्रकाश, शशिक मादक मुस्कान तथा चपलाक चञ्चलता सँऽ पृथक यौवनक उच्छृङ्खलता ओ उन्माद पत्नीत्वक स्वच्छ शुभ्र प्रफुल्लता मे परिणत भए मातृत्व मे समस्त भाव कैँ समेट नारीक चरम विकाश एवं प्रेमक पूर्णता वात्सल्यक रूप धारण करैछ।

अमरुक— प्रिये ! लतासन कृशाङ्गी, ज्योत्सनासन स्वच्छ, हँसीसन मधुर आलाप केनिहारि नारी निद्रासन चेतना कैँ की नहि हरण करैछ ?

रानी— जाहि वस्तुक ज्ञान होइछ ओकरहि इच्छा होइछ तथा जकर इच्छा होइछ ओकरहि मे प्रवृत्ति होइछ नाथ !

अमरुक— भयङ्कर सिंह कैँ फूलक सुगन्धि मे गजमद-गन्धक भ्रान्ति भए जाइछ महादेवी।

रानी— स्वप्नावस्थाक माया परिकल्पित दुःखक निवृत्ति निद्राक भङ्ग भेला सँऽ भए जाइछ नाथ !

अमरुक— सुन्दर कान्ति सँऽ हँस चन्द्रमा तथा सुन्दर गमन सँऽ कान्ता हँस बनि जाइछ ! मुदा ऊषर भूमि तथा मृगतृष्णा-जलक परस्पर सम्बन्ध कथमपि नहि होइछ महादेवी !

रानी— समस्त रसायन मे श्रेष्ठ रसुन तीक्ष्ण गन्धक हेतु निन्दित होइछ। तानक अभाव मे राग एवं मद-जलक अभाव मे

हाथीक शोभा नहि होइछ । वर्षाकालक कारी-कारी घटा सँऽ टपकैत जल-प्रवाह सँऽ सर्वप्रथम वियोगिनीक मुह भीजैछ तखन आकाश ओ पृथ्वीक ।

अमरुक— विवेकी निरुपम ओ निरातिशय सुखक इच्छा करैछ तथा राज्य सुख कैं स्वर्ग सुखक अपेक्षा अल्प बुझैछ मुदा गृहस्थक हेतु स्वर्गहुक सुख रतिसुखक अपेक्षा अपकृष्ट होइछ महादेवी !

वस्तुतः रतिसुख ओ परम तत्त्व मे समान भाव पाओल जाइछ । जँऽ एक आनन्द थिक तँऽ दोसर महानन्द । अतः एहि समक्ष आन कोन आनन्द भए सकैछ ? स्वर्ग एवं अपवर्गक इच्छा तँऽ वैरागी मे पाओल जाइछ मुदा गृहस्थक हेतु तँऽ एहि ठाम स्वर्ग एवं अपवर्गक सुख उपलब्ध होइछ ।

रानी— नाथ ! रमणी यद्यपि सौन्दर्यक प्रतिबिम्ब थिक तथा पुरुष एहि सौन्दर्यक अनुभव महज कामक हेतु करैछ तथापि काम सँऽ सृष्टिक बृद्धि संसारक प्रति स्नेह एवं आकर्षणक उत्पत्ति होइछ । काम जगतक स्थिरताक मूल कारण स्वरूप तथा पुरुषार्थक फल थिक । अतः सदा सँऽ मानव स्त्री कैं अनमोल पदार्थ बुझैत अछि तथा स्त्रीक रक्षा शृङ्गार एवं आन विविध प्रकारक वस्तु सँऽ आनन्द प्राप्तिक हेतु तँऽ करितहि अछि सङ्गहि मातृत्वक सर्वोच्च स्थान स्त्रिये कैं प्रदान करैत अछि ।

अमरुक— प्रिये ! शृङ्गारशास्त्र मे निपुण, विनोदिनी, विविध प्रकारक लीला-विलास केनिहारि, कोइली सदृश् मधुर वाणी सँऽ युक्त रमणी कैं कोन पुरुष तिरस्कार कए सकैछ ?

रानी— प्रभु ! कामक अर्थ यद्यपि सिमित बुझना जाइछ मुदा वस्तुतः एकर अर्थ व्यापक रूप मे अछि। कान, चर्म, नेत्र, जीभ, नाक आदि इन्द्रियक द्वारा मन, शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध आदि विषय भोग कैँ काम कहल जाइछ। आत्मा एहि विषय भोग सँऽ सुखक अनुभव करैछ। काम नित्य थिक।

काम सर्वोपरि एवं व्यापक रूप मे सर्वत्र पाओल जाइछ। स्वयं ब्रह्मा कामक उपभोग केलाक उपरान्त वैराग्यवृत्तिक अनुशीलन में समर्थ भेलाह। विषयेच्छा नैसर्गिक रूप मे प्राणीमात्रक बुद्धि मे सतत् प्रवाहित होइछ।

अमरुक— प्रिये ! स्त्री स्नेहक प्रतिपूर्ति एवं उपभोगक अपूर्व साधन प्रणय सँऽ मधुर, प्रेम सँऽ रम्य, शृङ्गार रसक प्रसार सँऽ उल्लसित, सन्दर्भ विशेष सँऽ युक्त भेला सँऽ अंतरङ्गक, स्वभावतः मृदु, रुचिर, विश्वस्त, संभोगक उत्सुकता कैँ प्रकट केनिहारि कामदेवक उद्‌बोधक थिक।

रानी— स्वामी ! स्त्रीक आदर्श प्रणय एवं प्रेम सँऽ पृथक स्त्री-पुरुषक विभिन्न अभिलाषाक एकीकरण मे पाओल जाइछ जकर सम्मिलित धार अनन्त दीस प्रवाहित होइछ।

अमरुक— प्रिये ! स्त्री-स्त्री एवं पुरुष-पुरुष मे प्रायः समताक अभाव पाओल जाइछ।

रानी— प्रमाण, काल एवं भावक विचार सँऽ एहि तरहक विषमताक प्रावल्य पाओल जाइछ नाथ ! नर तथा नारीक शरीर पर सूर्य ओ सोम शक्तिक प्रभावानुसार सत्त्वक संचारण होइछ जे काम सँऽ घनिष्ट सम्बन्ध रखैत अछि। गृहस्थक हेतु एहि ज्ञानक परम आवश्यकता होइछ। अतः

शास्त्रकार लोकनि युवक तथा युवती कैँ गुण, अलङ्कार, जीवित तथा परिकरक ज्ञानक परामर्श दैत छथि।

अमरुक— कलाक तात्पर्य वशीकरण तथा उद्देश्य विनोद एवं रसानुभूति सँऽ नहि की होइछ ?

रानी – कलाक साधारण अर्थ एहि तरहक होइछ मुदा कलाक वास्तविक अर्थ कौशल थिक जकर वस्तु ओ संस्कारक अनुसारे चौंसठि भेद पाओल जाइछ नाथ !

(महामन्त्रीक प्रवेश)

महामन्त्री—महाराजाधिराज एवं महादेवीक जय हो ! प्रभुक राज्यव्यवस्था एवं औदार्य नीति सँऽ प्रजागण अत्यन्त सुखी छथि। देशक कतहु कोनो कोण मे कोनहु तरहक असंतोष नहि अछि।

अमरुक— महामन्त्री ! राज्यक सुव्यवस्थाक श्रेयक भागी तँऽ महामंत्रीक थिकन्हि। जँऽ मन्त्री नीतिवान्, पराक्रमी एव उदार रहैछ तँऽ पृथ्वी धन-धान्य सँऽ पूर्ण होइछ तथा प्रजाक अभ्युदय होइत छैक।

महामन्त्री—प्रभु ! महाराजक संगीतक स्नेह सुनि किछु गीत गेनिहार लोकनि अयलाह अछि जे महाराज एवं महारानी कैँ अपन कौशल सँऽ प्रसन्न कैँ पुरस्कारक इच्छा व्यक्त करैत छथि।

अमरुक— तँऽ ठीक अछि दरबार खासक प्रबन्ध हो तथा गवैया लोकनि कैँ दरबार मे सम्मिलित हेवाक आदेश देल जाय !

दृश्य : चारि

राजा अमरुकक राजदरबार

(राजा अमरुक, रानी, मन्त्री एवं आन दरबारी लोकनि यथा स्थान बैसल छथि। सनन्दन एवं आन शिष्यक गवैयाक रूप मे गवैत प्रवेश)

चामर डोलैछ चौदिस नारि।
बहसल राजा पसादेल पसारि॥
रतनक चकमकि बलय झमार।
पुरति नयन जनि मयन हकार॥
काहु अलिङ्गय काहु निहारए।
काहु ललोपन काहु मलाओ मारए॥
काहुँ बुझाव विसेषि सिनेह।
पुलके मुकुल मण्डित देह॥
बिसरल जपतप योग धेयान।
की थिक दान की परम गेयान॥

सनन्दन— महाराज, महारानी एवं सभासद लोकनिक जय हो! श्रीमान् हम दूर देश सँऽ आयल गायक छी। श्रीमानक गान विद्याक प्रति प्रेम बुझि एतए धरि आयल छी।

अमरुक— गायक लोकनि ! अहाँ लोकनिक आगमन सँ हम अत्यन्त प्रसन्न छी। अहाँ लोकनि कोनो नव वस्तु सुनेवाक यत्न करू !

सनन्दन— खाद्यमुपाद्य विश्वमनुप्रविश्य
गूढ़मन्नमयादि कोशतुष-जाले।
द्रयो विविच्य युक्त्यवघाततो
यत्तण्डुलवदाददति तत्वमसि तत्वम् ॥

राजन ! चाउर भूसीक भीतर नुकायल रहैछ। चतुर पुरुष एहि भूसी कैं फटैक चाउर कैं एहि सँऽ बाहर निकालैत अछि। ब्रह्म आकाश आदि भूत कैं उत्पन्न कए एहि अन्दर नुकायल छथि। ओ पञ्चकोषक भीतर एहेन ढङ्ग सऽ नुकाएल छथि जे बाहरी दृष्टि रखनिहार व्यक्ति कैं ब्रह्मक सत्ताक पतो धरि नहि चलैत अछि मुदा विद्वान युक्तिक द्वारा ब्रह्मक विवेचना कए चाउर सदृश् जाहि आत्माक साक्षात्कार करैत छथि ओ तत्त्व अपनहि छी।

शमदमोपरमादि साधनैर्धीराः
स्वात्मनाऽत्मनि यदन्विष्य कृतकृत्याः।
अधिगतामित सच्चिदानन्दरूपा,
न पुनरिह खिद्यन्ते तत्त्वमसि तत्त्वम् ॥

हे राजन ! बुझू जे अपने के छी। विद्वान शम (मनक निग्रह), दम (इन्द्रियक निग्रह), उपरम (वैराग्य) आदि साधन सँऽ अपन बुद्धि मे जाहि सच्चिदानन्द रूप तत्त्वक प्राप्ति मे समर्थ होइत छथि तथा जे पावि जन्म मरण सऽ रहित भए अवागमनक क्लेश सँऽ मुक्त होइछ ओ तत्त्व अपनहि छी।

राजा अमरुक— की करब जप तप योग धेयान ।
की करब दान की परम गेयान ॥
ततिखने विहुरि यतिखने मेघ ।
कठजीव नारि स्वामी बिनु जीव ॥
चल चल सनन्दन चल निज गेह ।
योगी नहि लागे युवति जन नेह ॥
आशा छोड़ि पुरुष स्वच्छन्द ।
बादर दुर भेल उगि गेल चन्द ॥

(मन्त्री सँऽ)

महामन्त्री ! गवैया लोकनि कैँ प्रचुर पुरस्कार देल जाय ।

(अकस्मात राजा अमरुकक शरीरक पतन होइछ तथा राजा मृतक रूप मे पाओल जाइछ !

(पटाक्षेप)

दृश्य : पाँच

मण्डनमिश्रक भवन

(भारती स्वतः गवैत छथि)

पाप पराभव सब मोरा अनुभव
नहि अछि हृदय विषाद ॥
पाप प्रबल हिय चरण भगति दियऽ
नहि प्रभु आब वाद-विवाद ॥
जाग्रत रहत तन अनुरत रहत मन
तुअ पद अतुलित परसाद ॥
कर्म मीमांसा परम धर्म थिक
जानय सब संसार ॥
चतुराणन सँऽ छी वर माँगैत
जनजन बुझय वेदक मरयाद ॥

(मण्डनमिश्र प्रवेश करैत छथि)

मण्डन— चञ्चला लक्ष्मी जँऽ रात्रि मे चन्द्रमा मे जाइत छथि तँऽ कमलक आनन्द सँऽ वञ्चित रहैत छथि और जँऽ दिन मे कमल मे अवैत छथि तँऽ चन्द्रमाक आनन्द सँऽ वाञ्चित रहैत छथि मुदा चन्द्रमा ओ कमल दुहूक गुण सँऽ युक्त

जखन सँऽ ओ भारतीक मुँह मे आबि बसलीह अछि हुनका एकस्थ दुहूक आनन्द उपलब्ध होइत छन्हि।

भारती— स्नेह सँऽ बढ़ि आन बन्धन, तृष्णा सँऽ बढ़ि आन स्रोत एवं राज सँऽ बढ़ि दोसर ताप नहि होइछ नाथ !

मण्डन— असत् और सत् दुहूक मर्यादा कैँ बुझनिहार कैँ ब्रह्मवेत्ता कहल जाइछ प्रिये !

भारती— आकाश मध्य चन्द्रमाक तावत महत्व रहैछ जावत सूर्यक किरणक जाल प्रसारित नहि होइछ।

मण्डन— सूर्य मे संक्रमित सौभाग्य युक्त एवं कुहेश सँऽ आच्छादित चन्द्रमा ऐना सन मलिन बुझना जाइछ प्रिये !

भारती— समुद्र मे भगवान विष्णु शयन करथु जे अनन्तरत्न ओ लक्ष्मीक प्रसव केनिहारि थिकीह मुदा पियासल प्राणीक हेतु मरुभूमिक कूपो सँऽ इ निकृष्ट होइछ नाथ !

मण्डन— दीप मिझेबाकाल ने पृथ्वी ने आकाश आ ने कोनो दिशाक दीस जाइछ प्रिये !

(शंकराचार्यक अभिवादन करैत प्रवेश)

शंकराचार्य—धन्य मिथिला ! धन्य मिथिलाक शास्त्रीय परम्परा तथा धन्य मैथिल रमणीक पाण्डित्य !

(भारती सँऽ)

तँऽ आब अहाँ अपन प्रश्नक उत्तरक हेतु तत्पर भए जाउ।

भारती— भगवन् ! प्रभुक क्रिया कलाप सँऽ हम अवगत भए गेलहुँ। अतः आब उत्तरक आकांक्षा नहि अछि। साक्षात् शंकरक अवतार शंकराचार्य कैँ मिथिलाक रमणी कैँ शास्त्रार्थ मे

पराजयक हेतु परकाय प्रवेश एवं प्रपञ्च सँऽ काम शास्त्रक ज्ञान प्राप्त करब की विजय सूचक नहि? प्रभु हम अपन पराजय स्वीकार करैत छी तथा आब अपने कृपया मिश्रजी कैँ सन्यासक दीक्षा दए कृतार्थ करिऔन्ह।

शंकराचार्य—देवि! हमर उद्देश्य तँऽ अहाँ जनैत छी तखन जँऽ अहाँ चाहैत होय तँऽ श्री मिश्रजी कैँ हम प्रतिज्ञा सँऽ मुक्त कए सकैत छियन्हि।

भारती— प्रभु! भारतीय नारीक आदर्श त्याग एवं तपस्या मे पाओल जाइछ। जगत कल्यानक भावना एवं वेदवाणीक रक्षाक महत्त्व सर्वश्रेष्ठ अछि अतः नारीक मर्यादा मे स्वार्थपूर्ण भावनाक द्वारा कलङ्क टीका लगायब महानुचित थिक।

(मण्डनमिश्र सँऽ)

नाथ! सनातन धमक उत्थान तथा वेदवाणीक मुक्तिक हेतु अपने तत्पर भए जाए जे नास्तिकक कुतर्क मध्य बाझि जीर्ण भए गेलीह अछि।

साक्षात् शंकर सँऽ दीक्षा ग्रहण कए गायत्री मातृक वेदक रक्षा साक्षात् ब्रह्म सँऽ होयब विशुद्ध लीलामय प्रतीत होइछ। अतः शीघ्रातिशीघ्र दीक्षाक हेतु तत्पर भए जाए।

[समाप्त]